इकाई 15 पूँजी बाजार और इसका नियमन

संरचना

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 पूँजी बाजार : भूमिका, महत्त्व और कार्य

15.3 भारत में स्टॉक मार्केट का विकास

- 15.3.1 स्टॉक बाजार में सुधार की अभिप्रेरणाएँ
- 15.3.2 उदारीकरण
- 15.3.3 स्टॉक एक्सचेंज का ''व्यापारी संघ का प्रकारः एकाधिकार
- 15.3.4 खुली बोली लगाने की व्यवस्था
- 15.3.5 निष्कृति, परिशोधन और जोखिम प्रबंधन की समस्याएँ
- 15.3.6 नब्बे के दशक के घोटाले

15.4 वर्ष 1992 के बाद स्टॉक मार्केट सुधार

- 15.4.1 भारतीय प्रतिभूति विनिमय बोर्ड (SEBI) की स्थापना
- 15.4.2 बाजार निर्धारित संसाधन आबंटन और निवेशक के हितों की सुरक्षा
- 15.4.3 पारस्परिकता का अंत और राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेंज की स्थापना
- 15.4.4 कंप्यूटर के पर्दे पर लेन-देन
- 15.4.5 निष्कृति निगम और जोखिम परिसीमन
- 15.4.6 जोखिम प्रबंधन
- 15.4.7 विपत्तीकरण प्रबंधन
- 15.4.8 व्युत्पत्तियों का लेन-देन
- 15.4.9 वैश्वीकरण
- 15.4.10 व्यावर्ती परिशोधन और स्थगन उत्पादों पर प्रतिबंध

15.5 भारतीय स्टॉक मार्केट की संरचना और निष्पादन

15.6 भारत में शेयर व्युत्पत्ति बाजार

- 15.6.1 एक्सचेंज में विक्रयित और मेज पर विक्रयित व्युत्पत्तियाँ (Exchange - Traded and over the Counter Derivative Instrument)

15.7 भारत में विदेशी मुद्रा बाजार का विकास

15.8 भारत में चलन व्युत्पत्ति का बाजार

- 15.8.1 भारत में एक्सचेंज विक्रयित करेंसी व्युत्पत्तियां

15.9 भारत में दीर्घकालिक सरकारी बाँडों और निगम ऋणों का बाजार

- 15.9.1 निगम ऋण बाजार के विकास की संभावनाएँ

15.10 सारांश

15.11 अभ्यास प्रश्न

15.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

15.13 बोध प्रश्नों के उत्तर/संकेत

15.0 उद्देश्य

इस इकाई का मूल उद्देश्य आपको भारतीय पूँजी बाजार की संगठनात्मक संरचना, भूमिका और इसके कार्यों व निष्पादन से अवगत कराना है। इसके अध्ययन के बाद आप :

- नई आर्थिक नीति, 1991 के बाद से भारतीय पूँजी बाजार की व्यापक पुनर्रचना की व्याख्या; कर सकेंगे, और
- भारतीय अंश पूँजी बाजार, करेंसी बाजार, व्युत्पत्ति बाजार और निगम ऋण बाजार की भूमिका, संरचना और कार्यों का विवरण दे सकेंगे।

15.1 प्रस्तावना

एक गव्यात्मक (dynamic) और कुशल वित्त व्यवस्था किसी भी अर्थव्यवस्था के संसाधन बहुल से संसाधन वंचित क्षेत्रों के बीच संसाधनों के कुशल वितरण में निर्णायक भूमिका निभाती है। वित्त व्यवस्था के घटक हैं : वित्तीय बाजार, वित्तीय मध्यस्थी और वित्तीय उत्पाद या उपस्कर। एक समृद्ध और सक्रिय अर्थतंत्र के लिए एक भली प्रकार विकसित वित्तीय व्यवस्था की अत्यंत आवश्यकता होती है जिसमें अलग-अलग जोखिम रचना वाले मध्यस्थ कार्य कर रहे हों। भारतीय वित्त क्षेत्र की विशेषताएँ हैं : प्रगतिशील उदार नीतियाँ, सक्रिय अंशपूँजी और ऋण बाजार तथा विवेकशील मानक बैंक प्रविधियाँ आदि। यही नहीं, वित्तीय व्यवस्था अर्थतंत्र को उत्पादन की वर्तमान पराकाष्ठा तक ले जाने के सहायक होती है। वह ये कार्य निवर्तमान धन के उत्पादक (सक्रिय) पूँजी में परिवर्तन द्वारा करता है। जनसामान्य/विनियोगकर्ता को सोने-चाँदी, भूमि भवन और नकदी तथा स्थायी उपभोग की वस्तुओं के भंडार के स्थान पर बाँड, अंश पूँजी, वरीयता अंश पूँजी आदि में अधिक धन लगाने को प्रेरित और प्रोत्साहित किया जाता है। वित्त व्यवस्था सकल निवेश के आकार को भी बढ़ाती है। घाटे के सहारे खर्च करने वाली इकाइयों को अधिक पूँजी पर नियंत्रण प्रदान कर ये व्यवस्था उन्हें अधिक निवेष करने की क्षमता से संपन्न कर देती है। साथ ही वित्त और जोखिम की लागतों में कमी द्वारा भी निवेश कार्यों को प्रोत्साहन मिलता है। इसके लिए बीमा सेवाएँ एवं पूर्वोपाय सुयोग सुलभ कराये जाते हैं। साथ ही, धन अंतरण, मितिकाटा, स्वीकृति और गारंटी आदि की वित्तीय सेवाएँ भी इसी कार्य में सहायक रहती हैं। ये (वित्त व्यवस्था) केवल निवेश के स्तर का उन्नयन नहीं करतीं, वस्तुतः ये विभिन्न निवेश मार्गों की संसाधन आबंटन की दक्षता के स्तर को भी ऊपर उठाती हैं। चित्र 15.1 में भारतीय वित्त व्यवस्था के आयोजन आरेख को प्रस्तुत किया गया है।

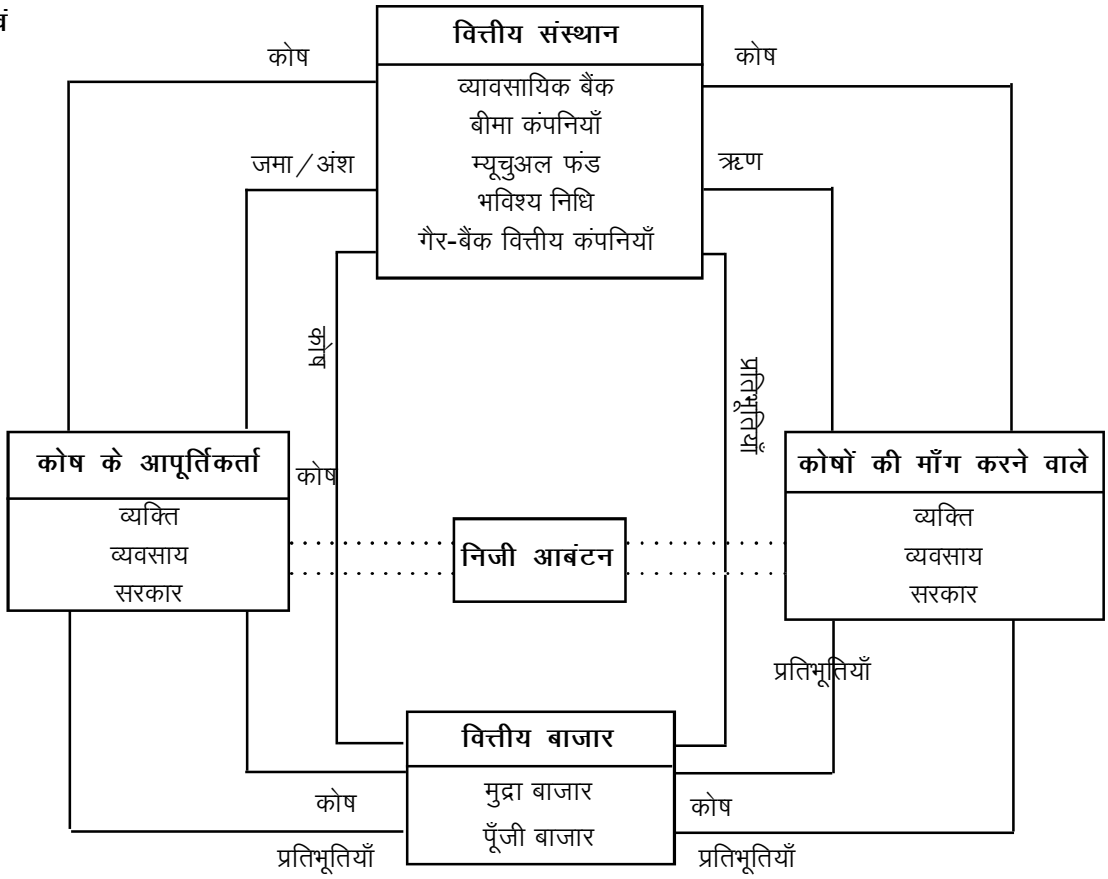

रेखाचित्र 15.1: भारतीय वित्त व्यवस्था

पूँजी बाजार अधिक व्यापक वित्तीय बाजार का एक अंग है। पूँजी बाजार में लंबी या अनिश्चित परिपक्वता अवधि की वित्तीय परिसंपत्तियों का लेन-देन होता है। इसे दो भागों में बाँटा जाता है– प्राथमिक और द्वितीयक। प्राथमिक बाजार के 'निम्नांकन' विधि द्वारा नए अंश (शेयर) और बाँडों का निर्गम या बिक्री होती हे। द्वितीय बाजार में उन पूर्व निर्गमित शेयरों का स्टॉक एक्सचेंज या खुली मेज़ वाली एक्सचेंज में लेन-देन होता है। इस पूँजी बाजार के अवयव होते हैं: स्टाक या अंश (शेयर) बाजार, ऋण बाजार, व्युत्पत्ति बाजार, विदेशी विनिमय बाजार और वस्तु बाजार। इन सभी में अनेक प्रकार के वित्तीय दावों और सेवाओं का क्रय-विक्रय होता है। इन बाजारों में कंपनियाँ, वित्तीय संस्थान, व्यक्ति और सरकार प्रत्यक्षतः या दलालों और एक्सचेंज में भागीदार व्यापारियों के माध्यम से (और एक्सचेंज से बाहर भी) वित्तीय निक्षेपों का क्रय-विक्रय करते हैं। इन बाजारों की मांग एवं आपूर्तिकर्ता वित्तीय संस्थान, अभिकर्ता, बैंक, दलाल, व्यापारी, ऋणदाता, बचतकर्ता और अन्य ऐसे व्यक्ति (संस्थान भी) होते हैं जो कानूनों, अनुबंधों, सहमतियों और संप्रेषण तंत्र के माध्यम से परस्पर जुड़े होते हैं। पूँजी बाजार का प्रमुख ध्येय तो निवेशकों के पास उपलब्ध अतिरिक्त कोषों को उन तक पहुँचाना है जिनके पास कोषों का अभाव है। भारतीय प्रतिभूति विनिमय बोर्ड जैसे नियामक अन्य दायित्व निभाने के साथ-साथ अपने अधिकार क्षेत्र में आने वाले पूँजी बाजार के उप-अंगों (घटकों) की निगरानी करते हैं ताकि निवेशकों को धोखाधड़ी आदि से बचाया जा सके।

देश के 1991 के भुगतान– शेष संकट के समय ही भारत में वित्तीय बाजारों के सुधार और उदारीकरण की प्रक्रिया भी आरंभ हुई थी। इन सुधारों का मुख्य आग्रह एक विविधतापूर्ण, दक्ष और प्रतिस्पर्धापूर्ण वित्त व्यवस्था का निर्माण करना था। अंततः

क्रियात्मक नम्यता, संवर्धित वित्तीय अर्थक्षमता और संस्थानात्मक संपुष्टि के माध्यम से संसाधन आबंटन प्रक्रिया को और बेहतर बनाना ही उद्देश्य था। किंतु सुधारों का क्रम उत्पाद बाजारों की तुलना में कुछ शिथिल ही रहा है। इसका आंशिक कारण यह भी रहा है कि बैंकों पर अधिक अनम्य विवेकपूर्ण मानक लागू करने पर उनके परिसंपित्त पत्र संचयों में बहुत सी समस्याएँ उजागर हुई हैं। सुधारों से पूर्व सरकारी बैंकों का 90 प्रतिशत बैंक परिसंपत्तियों पर नियंत्रण था (यह 2005 के अंत तक घट कर मात्र 10 प्रतिशत रह गया) और इन कोषों का अत्यंत उच्च अनुपात सरकारी अनुपातों में ही निवेशित था। ब्याज दरों का निर्धारण प्रशासन करता था; साख का आबंटन सरकारी नीति का आधार होता था – यहां तक कि एक सीमा से अधिक बड़ा प्रत्येक ऋण रिज़र्व बैंक की अनुमति के बाद ही दिया जाता था। पूँजी बाजार अविकसित था और स्टॉक बाजार भी बिखरा हुआ था। बड़ी स्टॉक एक्सचेंज मुख्यतः अपने सदस्यों के हितों का ही ध्यान रखती थीं – निवेश जनता का नहीं। व्यत्पत्तियों का बाजार तो था नहीं, पूँजी पर बहुत व्यापक नियंत्रण थे और कंपनियां उनसे बचने के लिए विदेशों में ऋण भी नहीं ले पाती थीं। एशियन संकट (1997-98) और उससे उत्पन्न लहरों ने भारतीय अधिकारियों को आंतरिक वित्त व्यवस्था को सशक्त करने को बाध्य कर दिया। जो सुधार प्रक्रिया उस समय प्रारंभ हुई (और अभी भी चल रही है) वह इन सिद्धांतों पर आधारित रही है, (i) वित्तीय व्यवस्था में जोखिमों का निवारण, (ii) वास्तविक क्षेत्र को संसाधनों का दक्षतपूर्ण आबंटन; (iii) वित्त व्यवस्था को विश्व स्तर पर प्रतियोगी बनाना; और (iv) बाह्य क्षेत्र को अनावृत करना। ध्येय था एक ऐसी विविधतापूर्ण, कुशल और स्पर्धाशील वित्त व्यवस्था का निर्माण करना जो अंततः व्यावहारिक नम्यता, वर्धित अर्थक्षमता और संस्थात्मक सुदृढ़ीकरण के माध्यम से संसाधन आबंटन की दक्षता में वृद्धि कर पाएगी।

15.2 पूँजी बाजार : भूमिका, महत्त्व और कार्य

पूँजी बाजार पूँजीगत (वित्तीय) परिसंपत्तियों का बचतकर्ताओं से निवेशकों को अंतरण करने में सहायक होता है। ये तरलता को पर्याप्त स्तर पर बनाए रखता है– इससे उन परिसंत्तियों को बिना विशेष हानि उठाए नकदी में बदल पाना संभव हो जाता है। इस बाजार का एक अन्य लाभ भी है : परिसंपत्तियों का अंतरण मूल्य के रूप में उनके मूल्यमान का एक मापक भी मिल जाता है। पूँजी बाजार के मुख्य कार्यों से सम्मिलित है : जानकारी का दक्षतापूर्ण प्रसारण, वित्तीय उपस्करों का तुरंत मूल्यांकन, कीमत जोखिम और बाजार जोखिम का बीमा, व्यापक स्तर पर बाजार में भागीदारी सहज बनाना, सरल लेन-देन प्रक्रिया द्वारा व्यावहारिक दक्षता का संवर्धन, विनिमय की लागतों और संगणयन की अवधि को कम करना आदि। इनके साथ-साथ पूँजी बाजार अर्थव्यवस्था के वास्तविक और वित्तीय क्षेत्रों, अंश और ऋण उपस्करों, दीर्घ एवं अल्प अवधि कोषों, निजी और सार्वजनिक क्षेत्रों तथा आंतरिक एवं विदेशी कोषों के बीच पारस्परिकता के विकास में बहुत ही महत्त्वपूर्ण योगदान देता है। यह निवेश, विनिवेश और पुनः निवेश की प्रक्रियाओं के माध्यम से समाज के धन को 'कुशल क्षेत्रों/प्रयोजनों' की ओर प्रवाहित करता है। इसकी भूमिकाओं में सम्मिलित है बचतें जुटाना और पूँजी निर्माण को बढ़ावा देना, आर्थिक सवृंद्धि का संवर्धन, दीर्घकालीन पूँजी एकत्र करना, अनेक प्रकार की वित्तीय सेवाओं के प्रावधान करना और निवेश कोषों का अभीष्ट स्तर पर दक्षतापूर्वक प्रयोग संभव बनाना। इसकी कुछ चुनी हुई भूमिकाओं की हम इस प्रकार व्याख्या कर सकते हैं :

i) **बचत जुटाना** : यह पूँजी बाजार पूरी अर्थव्यवस्था में से निष्क्रिय पड़ी बचतों को निवेश हेतु जुटाता है। ये व्यक्तियों को अपना धन उत्पादक निवेश में लगाने की प्रेरणा प्रदान करता है। दूसरे शब्दों में, पूँजी बाजार निष्क्रिय पड़े मौद्रिक कोषों को उपयुक्त निवेश में लगाता है।

ii) **पूँजी निर्माण की दर में वृद्धि** : पूँजी बाजार पूँजी निर्माण में सहायक है। पूँजी निर्माण का अर्थ है अर्थव्यवस्था के वर्तमान पूँजी संचय में निबल वृद्धि। समाज के निष्क्रिय संसाधनों और बचतों को उत्पादक कार्यों में निवेश के लिए जुटाकर यह बाजार उन्हें कृषि, उद्योग आदि के लिए उपलब्ध कराता है। इस प्रकार यह पूँजी निर्माण की वृद्धि में सहायक है।

iii) **निवेश के माध्यमों का प्रावधान** : पूँजी बाजार दीर्घावधि के लिए धन जुटाता है। अतः लंबी अवधि तक के निवेश के इच्छुक व्यक्तियों को यह उपयुक्त माध्यम सुलभ करा देता है। यह निवेशकों को उपयुक्त ब्याज़ दर पाने में सहायक होता है। साथ ही बाँड, अंश पूँजी, म्युचुअल फंड इकाइयाँ, बीमा पॉलिसीज़ आदि से निश्चय ही आम जनता को अनेक प्रकार के निवेश विकल्प प्रदान हो जाते हैं।

iv) **आर्थिक संवृद्धि और विकास की दरों में वृद्धि** : पूँजी बाजार राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में उत्पादन और उत्पादिता बढ़ाता है। यह व्यावसायियों की दीर्घकालिक संसाधनों की जरूरत को पूरा करता है। इससे शोध और विकास में सहायता मिलती है, जिसके परिणामस्वरूप अर्थव्यवस्था में रोज़गार और संरचनात्मक सुविधाओं के प्रसार के माध्यम से उत्पादन और उत्पादिता में वृद्धि होती है।

v) **धन कोषों का उपयुक्त नियमन** : पूँजी बाजार केवल धन जुटाने का कार्य ही नहीं करता– यह उस धन का उपयुक्त प्रयोजनों में आबंटन भी करता है। इसका उन कोषों पर इतना नियंत्रण अवश्य रहता है कि उन्हें गुणात्मक दृष्टि से अधिक उपयुक्त कार्य में प्रवाहित कर सके।

vi) **सेवाओं का प्रावधान** : विभिन्न प्रकार की निवेशक सेवाएँ प्रदान करना पूँजी बाजार का एक अहम भाग है। यह उद्योगों को दीर्घ एवं मध्यम अवधि के वित्त के साथ-साथ पृष्ठांकन, परामर्श, आदि की सेवाएँ एवं निर्यात वित्त आदि भी उपलब्ध कराता है। इन सेवाओं से सभी विनिर्माण उद्योग लाभान्वित होते हैं।

vii) **कोषों की निरंतर उपलब्धता** : इस बाजार में दीर्घकालिक निवेश के जरिये निरंतर कोष सुलभ रहते हैं। यह एक 'तरल' बाजार है जहाँ निरंतर धन कोष सुलभ रहता है। यहाँ क्रेता और विक्रेता दोनों निरंतर प्रतिभूतियों का आदान-प्रदान करते रहते हैं। पूँजी बाजार का अधिकांश लेन-देन स्टॉक एक्सचेंज से जुड़ा रहता है। इससे पूँजी बाजार की परिसंपत्तियों को बचा पाना बहुत सरल रहता है।

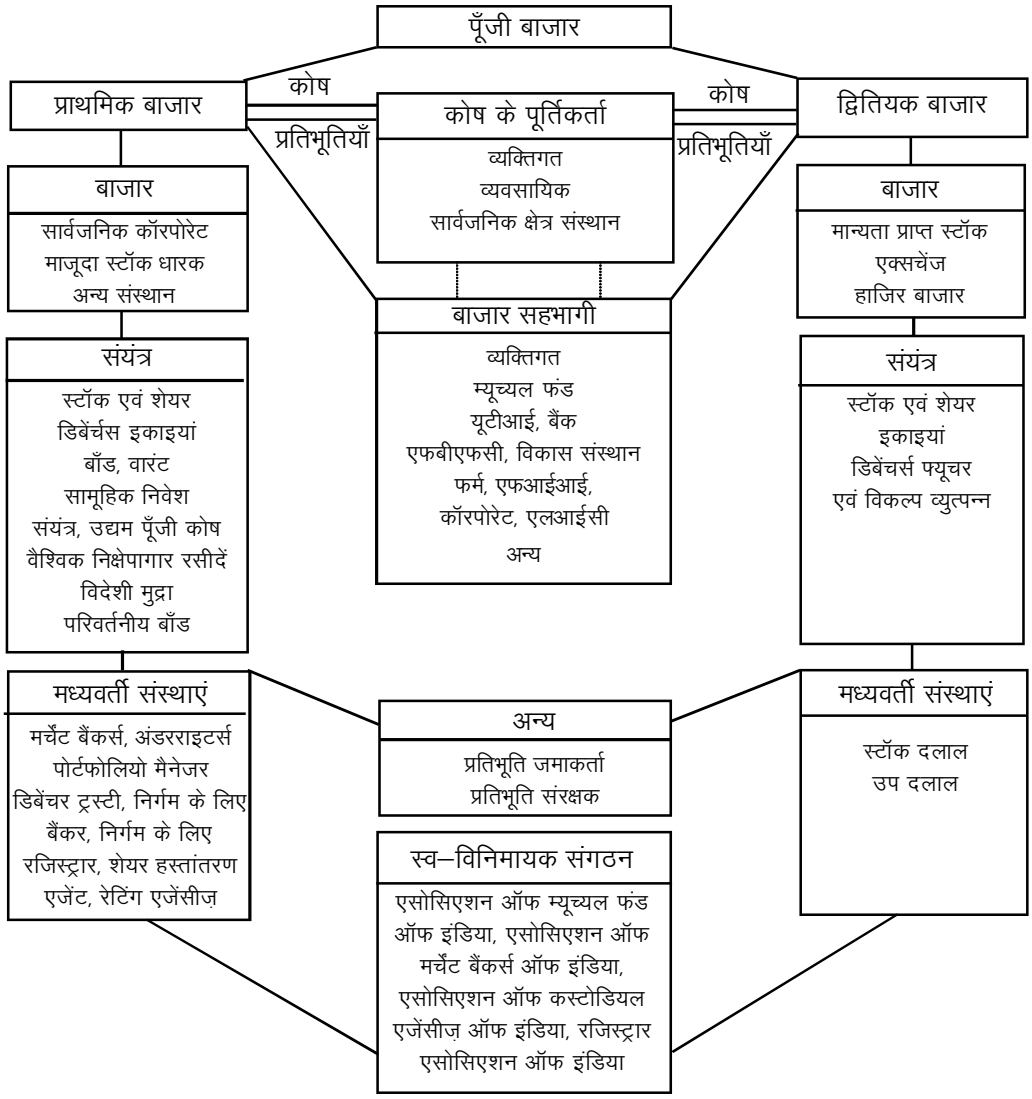

चित्र 15.2 : भारतीय निगम प्रतिभूति बाजारों के घटक (अवयव)

बोध प्रश्न 1

1) वित्तीय प्रणाली के घटक क्या हैं?

.....

.....

.....

2) पूँजी बाजार के भागीदार कौन हैं?

.....

.....

.....

3) पूँजी बाजार के मुख्य कार्य क्या हैं?

.....

.....

.....

15.3 भारत में स्टॉक मार्केट का विकास

विकास प्रक्रिया में स्टॉक मार्केट की भूमिका सभी जानते और स्वीकार करते हैं। अनेक कारणों से एक विकसित स्टॉक मार्केट की उपस्थिति को आर्थिक संवृद्धि का सूचक माना जाता है। ये कारण है : (क) ये बैंकों और वित्तीय संस्थाओं से अलग आंतरिक बचतें जुटाने का एक अन्य ऐसा माध्यम प्रदान करते हैं; (ख) बाजार के माध्यम से पूँजी के आबंटन की स्टॉक मार्केट की नीति निवेश के उत्पादिता में सुधार सुनिश्चित करती है; और (ग) निगम नियंत्रण के बाजार का निर्माण कर प्रबंधकों के अनुशासन के स्तर को सुधारती है। एक स्वतंत्र मार्केट के विकास का सबसे संक्षिप्त सूचक तो बाजार पूँजीकरण अनुपात – (MCR)[1] है। इसे स्टॉक मार्केट के 'आकार' का मापक भी कहते हैं। इसका आर्थिक महत्त्व यही है कि अधिक बड़ा MCR अधिक पूँजी जुटाने और उसके जोखिमों के विविधीकरण का द्योतक है। दूसरा बड़ा सूचक बाजार की तरलता है। इसे मूल्य और विनियमित मूल्य के अनुपात तथा कुल लेन-देन के अनुपात द्वारा मापा जाता है। मूल्य विनियमित अनुपात स्टॉक मार्केट में खरीदें/बेचे गए शेयरों के मूल्य और GDP का अनुपात है तो कुल लेन-देन अनुपात विनिमयित शेयरों के सकल मूल्य तथा MCR का अनुपात है। एक अन्य बड़ा स्टॉक मार्केट सूचक उसकी परिवर्तनशीलता है। ये स्टॉक बाजार में परिसंपत्तियों के उतार-चढ़ाव का ही नाम है और यह मार्केट के विकास के लिए महत्त्वपूर्ण संकेत प्रदान करती है।

भारत के प्रतिभूति बाजार में 1990 के दशकारंभ में बहुत बड़े बदलाव आए हैं। बाजार की दक्षता, पारदर्शिता को बढ़ाने, गलत व्यापार व्यवहार को नियंत्रित करने एवं भारतीय प्रतिभूति बाजार को अंतर्राष्ट्रीय स्तर का बनाने के उद्देश्य से स्टॉक मार्केट के उदारीकरण, नियमन और विकास की दिशा में अनेक सुधारों का प्रारंभ किया गया है।

किंतु 1990 के दशक का प्रारंभ ही बाजार के दुर्व्यवहार के अनेक प्रकरणों को अखबारों में सुर्खियाँ भी दिलाता रहा है। इन प्रकरणों से बाजार के मुख्य कार्य बुरी तरह बाधित हुए हैं। ये बाधित कार्य हैं : (क) कीमत निर्धारण की दक्षता, और (ख) बचत करने वाले गृहस्थों और निवेश प्रकल्पों के लिए धन जुटाने में लगे व्यवसायों के बीच मध्यस्थता। अनेक विशेषज्ञों का मानना है कि यदि वे संकट नहीं आए होते तो संभवतः देश में राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेंज (1993) की स्थापना और परिवर्ती समन्वय को अपनाने तथा व्युत्पन्न निक्षेपों के व्यापार (2001) जैसे सुधार नहीं हो पाते।

15.3.1 स्टॉक मार्केट में सुधार की अभिप्रेरणाएँ

आइए, 1990 के दशक की उन समस्याओं पर एक नज़र डालें जो प्रतिभूति बाजारों में सुधार के लिए प्रेरणा का स्रोत बन गई।

15.3.2 उदारीकरण

नई आर्थिक नीति द्वारा बाजारों को स्वतंत्रता प्रदान करना ही प्रथम अभिप्रेरणा रहा है। इसका अर्थ था कि शेयरों और सरकारी बाँड जैसी परिसंपत्तियों की कीमतों पर से और साख से भी प्रशासकीय नियंत्रण हटा दिए गए। अतः बाजार के विकास और नियमन के लिए एक स्वयं-संयत शिखरस्थ संस्था की आवश्यकता अनुभव होने लगी।

[1] ये बाजार की सूची में सम्मिलित सभी शेयरों के मूल्य के योगफल का सकल घरेलू उत्पाद से अनुपात है।

15.3.3 स्टॉक एक्सचेंज का व्यापारी संघ का प्रकारः एकाधिकार

1992 तक बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज दलालों की एक संस्था थी और ये बाजार में सम्मिलित होने में बाधक बनी रहती थी– इस प्रकार की एकाधिकारिता के कारण मध्यस्थता की लागत बहुत अधिक रहती थी। एक्सचेंज की सदस्यता कुछ व्यक्तियों तक सीमित थी और सीमित दायित्व कंपनियों को सदस्यता बिल्कुल नहीं दी जाती थी।

एक्सचेंज दलालों का एक संघ था और इसमें अनेक प्रकार की हेरा-फेरियाँ चलती थी। परिणामस्वरूप बाहरी व्यक्ति तो अपने शेयरों की न्यूनतम कीमत भी मुश्किल से पाते थे – क्योंकि बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज में शेयर कीमतों के उच्चावचन उसके सदस्य दलालों की मर्जी के अनुसार ही चलते थे।

छोटे निवेशकों विशेषकर मुंबई से बाहर रहने वालों को इस स्टॉक एक्सचेंज के माध्यम से अपनी परिसंपत्तियों को नकद बनाने के लिए उन-दलालों की एक लंबी श्रृंखला का सहारा लेना पड़ता था – प्रत्येक उप दलाल अपनी मनमाना कमीशन वसूलता था – एक्सचेंज में निर्धारित कीमत में ही दलाली भी सम्मिलित थी। बाहर रहने वाले निवेशकों का 'आदेश' एक्सचेंज तक पहुंचने से पहले कम से कम चार उप-दलालों के हाथ लग चुका होता था और शेयर कीमत वास्तविक से कम से कम 10 प्रतिशत अधिक हो जाती थी।

अतः यह आवश्यक लग रहा था कि एक्सचेंज के प्रबंधन को दलालों के नियंत्रण से मुक्त कराया जाए ताकि बाध्य निवेशकों को हानि पहुंचाए बिना एक्सचेंज के काम-काज सुचारू रूप से चल सकें।

15.3.3 खुली बोली लगाने की व्यवस्था

यह व्यवस्था बहुत ही विचित्र थी। एक्सचेंज के 'पाटिए' पर दलाल एक-दूसरे को इशारे करके और अपने शरीर के अंगों के संचालन द्वारा सौदेबाज़ी करते थे। वास्तविक निवेशक को इतना बता भर दिया जाता था कि उसके शेयर कितने में बिक गए – या उसे कुल कितना भुगतान करना है। उसे कभी भी वास्तविक कीमत और कमीशन आदि के बारे में कुछ भी पता नहीं चलता था। यह व्यवस्था अपारदर्शिता भरी थी और इसके स्थान पर सभी लेन-देनों की पूरी जानकारी वाली सुस्पष्ट व्यवस्था की आवश्यकता थी।

15.3.4 निष्कृति, परिशोधन और जोखिम प्रबंधन की समस्याएँ

बाजार में 'वायदा-बाजार' जैसी परिशोधन व्यवस्था थी। कहने को इसकी अवधि एक पखवाड़ा थी– पर ये समान्यतः 14 से 30 दिन तक कभी भी हो सकती थी। इसका अर्थ था कि सौदा एक पखवाड़े का होना था। इसकी पूर्व निर्धारित समापन तिथि होती थी। उस तिथि के अंत पर केवल खुल रहे सौदों का लेन-देन होता था। वास्तव में पूरी व्यवस्था में ऐसा कोई अनुशासन नहीं था कि इस 14 दिन के परिशोधन चक्र का सही अनुपालन भी हो। बाजार की एक और विशेषता थी : 'बदला प्रथा' – दलाल एक परिशोधन चक्र के सौदों को अगले चक्र पर टाल सकते थे अर्थात् 14 दिन बाद भी खुले सौदों को अंतिम रूप देना आवश्यक नहीं रहता था। अतः एक स्टीक, भरोसेमंद और जल्दी काम करने वाली परिशोधन प्रणाली की भी आवश्यकता थी।

यह उपर्युक्त विचित्रतापूर्ण परिशोधन व्यवस्था भी एक्सचेंज की सूची के 100 सबसे बड़े शेयरों पर लागू होती थी। बाकी सब तो पारस्परिक आधार पर चलता था– यानि

उनमें विडूपता और रक्षताहीनता के साथ-साथ लेन-देन की लागत का भी कोई हिसाब नहीं रहता था। वायदा बाजारी परिशोधन और बदला मिलकर सामने वाले पक्ष के लिए बहुत जोखिम भरा माहौल पैदा कर देते थे। सामान्यतः दूसरी पक्ष की जोखिम को सीमित रखने और परिशोधन व्यवस्था की त्रुटियों को नियंत्रित रखने के लिए दलालों को अपने कुल लेन-देन के एक अनुपात की राशि एक्सचेंज में जमा रखनी पड़ती है। इसे 'पर्याप्त पूँजी' का मानक कहा जाता है। परिशोधन की आधुनिक व्यवस्था की एक निर्णायक विशेषता **'नवादेशन'** कहलाती है किंतु पुरानी दलाल संघ जैसी एक्सचेंज में न तो परिशोधन ग्रह निगम होते थे और न ही नवादेशन प्रणाली। उनके परिशोधन गृह सामने वाले पक्ष की जोखिम का कोई हिसाब नहीं रखते थे। इसका अवस्था का सुधार केवल पृथक परिशोधन निगम के गठन से संभव था।

इस व्यवस्था की सबसे बड़ी समस्या तो भौतिक परिशोधन थी जहाँ शेयर प्रमाणपत्रों और धन की परिशोधन तिथि पर अदला-बदली होती थी। शेयरों के अंतरण के लिए विक्रेता द्वारा पृष्ठांकन के बाद उन्हें जारी करने वाली कंपनी के पंजीयक के पास अनुमोदन के लिए भेजा जाता था। अनेक मामलों में ये हस्तांतरण प्रक्रिया बड़ी लंबी हो जाती थी। बहुत से लेन-देन किसी न किसी कागज़ी त्रुटि के कारण पूरे नहीं हो पाते थे। इस जारी व्यवस्था में कई कदमों पर चोरी, नकली प्रमाणपत्र बनाने, हस्ताक्षरों के सही सत्यापन न होने और अनेक प्रकार की प्रशासकीय अकुशलता की संभावनाएँ रहती थीं। यदि इस अवधि में किसी शेयर के अनेक अंश हो जाते या उन पर कोई क्रयाधिकार निर्गमन आता या लाभांश घोषित हो जाता तो उसके लाभ भी क्रेता को नहीं मिलते थे। अतः विपत्ति स्वरूप में प्रतिभूति धारण और उनका इक्लेक्ट्रॉनिक विधि से अंतरण करने की व्यवस्था की रचना आवश्यक समझी गई। इसी से उन शेयर हस्तांतरण आदि की समस्याओं का उपचार हो सकता था।

15.3.6 नब्बे के दशक के घोटाले

उस दशक का पहला 'शेयर बाजार घोटाला' 1992 में सामने आया। इसकी चपेट में सरकारी बॉंड और शेयर बाजार दोनों ही आ गए थे। इसका सूत्रधार हर्षद मेहता था और लगभग रु.5400 करोड़ का मामला था। सारी हेरा-फेरी भारत सरकार के बॉंडों के बाजार में परिशोधन व्यवस्था अदक्षता पर आधारित थी।

जब देशव्यापारी परिशोधन और बिना नाम बताए लेन-देन बाजार की सामान्य व्यवस्था बन गए (1995) तो बड़े पैमाने पर बाजार में जाली शेयर भी दिखाई देने लगे। शाह और थामर्स[2] के अनुमान के अनुसार उस समय लगभग एक प्रतिशत जाली शेयर बाजार में (परिशोधन में) दिखाई पड़ रहे थे। इसी घोटाले ने अधिकारियों को प्रतिभूतियों के विपत्तीकरण (Dematerialised) पर विचार करने को बाध्य किया।

हर्षद मेहता के बाद 1997 में सी.आर.बी. ग्रुप का 2700 करोड़ का घोटाला सामने आया। यह ग्रुप वित्त एवं गैर-वित्त कंपनियों का एक समूह था। इसकी वित्त कंपनियों ने अपने निष्पादन के झूठे आंकड़े गढ़ कर विदेशों से धन प्राप्त किया था। ये भारतीय रिज़र्व बैंक और भारतीय प्रतिभूति विनिमय बोर्ड की निगरानी व्यवस्थाओं की विफलता का प्रमाण भी था।

हर्षद मेहता घोटाले का एक अन्य संस्करण 1998 में उजागर हुआ। इसमें पाया गया कि बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज के अध्यक्ष, कार्यकारी निर्देशक, उपाध्यक्ष आदि सभी मिलकर

[2] शाह, अजय और थॉमस, सुसेन (2001) : The evolution of the securities markets in India in the 1990s.

एक भुगतान संकट से बचने के लिए एक्सचेंज की व्यापार प्रणाली के आंकड़ों में हेरा-फेरी कर रहे थे। इन सभी को त्यागपत्र देने को विवश होना पड़ा।

केतन पारेख का 10 कंपनियों (K10) के शेयरों में ऋण के आधार पर भारी खरीददारी का घोटाला तो विश्व स्तर पर सूचना प्रौद्योगिकी (IT) कंपनियों के शेयरों में भारी गिरावट का कारण बन गया। इस दृष्टि से यह सी आर बी और हर्षद मेहता, दोनों को मात दे गया। इस संकट के साथ कलकत्ता एक्सचेंज में चल रहे गैर-कानूनी बदला बाजार और बैंकों के साथ मिलकर घोटाले के आरोप भी उभर कर आए हैं। अभी इनकी जांच चल रही है।

इन संकटों और घोटालों के एक के बाद एक आने पर 'सेबी' की प्रतिभूति बाजार के नियमन और विकास की क्षमता को लेकर अनेक प्रश्न उठे हैं। हाँ, सेबी ने निवेशक सुरक्षा, दिशा-निर्देशों और बदला पर प्रतिबंध तथा परिवर्ती परिशोधन एवं अन्य अनेक कदमों के माध्यम से उन प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयास भी किया है।

15.4 वर्ष 1992 के बाद से स्टॉक मार्केट सुधार

पिछले भाग में चर्चित समस्याओं से अनुप्रेरित होकर नब्बे के दशक में अनेक प्रकार के स्टॉक मार्केट सुधारों की प्रक्रिया प्रारंभ की गई। मुख्य उपाय ये रहे हैं :

15.4.1 भारतीय प्रतिभूति विनिमय बोर्ड (SEBI) की स्थापना

पूँजी निर्गम (नियंत्रण) अधिनियम, 1947 के अनुसार पूँजी निर्माण की इच्छुक फर्मों को निर्गम के आकार, प्रकार और कीमत के विषय में केंद्रीय सरकार से पूर्वानुमति लेनी होती थी। किंतु 1991 के उदारीकरण की धारा के अनुरूप संसाधनों के बाजार आधारित आबंटन के लिए इस अधिनियम को निरस्त कर 1992 में एक नए विनियमक के रूप में भारतीय प्रतिभूति विनिमय बोर्ड की स्थापना की गई। इसको ये मुख्य दायित्व सौंपे गए :

क) प्रतिभूतियों में निवेशकर्ता (विशेषकर छोटे निवेशक) के हितों का संरक्षण;

ख) प्रतिभूति बाजार का विकास; और

ग) प्रतिभूति बाजार का नियमन।

सेबी को पूँजी निर्गमकर्ता निगमों ही नहीं बल्कि प्रतिभूति हस्तांतरण आदि के शेयर बाजार के सभी कामों से जुड़े व्यक्तियों और संस्थानों की निगरानी का काम सौंपा गया है। यही नहीं, इसे कंपनी अधिनियम, एस सी (आर) अधिनियम की सहगामी और शेष शक्तियाँ भी सौंप दी गई है। कंपनी अधिनियम की प्रतिभूति बाजार विषयक व्यवस्थाओं का प्रशासन भार भी सेबी के ही पास है।

15.4.2 बाजार निर्धारित संसाधन आबंटन और निवेशक के हितों की सुरक्षा

पूँजी (नियंत्रण) अधिनियम की निरस्ति और सेबी की स्थापना के बाद सरकार के पूँजी निर्गम, उसके कीमत निर्धारण, अधिमूल्य निर्धारण, ऋणपत्तों पर ब्याज दर निर्धारण आदि के अधिकार समाप्त हो गए और विभिन्न स्पर्धाशील निर्गमों के बीच संसाधनों का आबंटन बाजार के सहारे छोड़ दिया गया।

निवेशकों के हित में सेबी ने अपने प्रकटीकरण और निवेशक संरक्षण निर्देश जारी किए हैं। इसमें निर्गमकर्ता और मध्यस्थों के लिए अनेक महत्त्वपूर्ण बातें भावी निवेशकों को साफ-साफ बताने का प्रावधान है। सेबी के अनुसार ये कार्य प्रतिभूति बाजार के व्यवस्थित विकास के लिए आवश्यक हैं। अतः सेबी के निर्देश निर्गम, निर्गमकर्ता और प्रतिभूतियों के प्रकार आदि के विषय में बेहतर जानकारी स्पष्ट करने का आग्रह करते हैं ताकि निवेशक सोच समझकर अपना निर्णय ले सकें।

आर्थिक कार्य विभाग, कंपनी कार्य विभाग, सेबी और प्रतिभूति एक्सचेंजों ने भी निवेशकों की शिकायत के निपटान के लिए प्रकोष्ठों का गठन किया है। एक्सचेंज निवेशकों के दावों की भरपाई करने के लिए निवेशक संरक्षण/उपभोक्ता संरक्षण/व्यापार गारंटी कोषों की स्थापना की हैं। ये दावे एक्सचेंज में हुए लेन-देन को उसके व्यापारी सदस्य द्वारा पूरा नहीं करने के कारण उत्पन्न होते हैं। निवेशकों की जागरूकता बढ़ाने और उनके हितों की रक्षा के लिए कंपनी कार्य विभाग ने भी एक निवेशक शिक्षा और संरक्षण कोष स्थापित किया है।

15.4.3 पारस्परिकता का अंत और राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेंज की स्थापना

एक राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेंज के गठन के विचार पर 1993 में पहले-पहले गंभीरतापूर्वक चिन्तन किया गया। उस समय सरकार द्वारा नवगठित सीधे मेज पर व्यापार की व्यवस्था चल रही थी पर उसके अनुभव अधिक अच्छे नहीं थे। यह आशंका भी थी कि राष्ट्रीय एक्सचेंज से बॉम्बे एक्सचेंज की तरलता दुष्प्रभावित होगी। किंतु निवेशकों के हितों के लिए दलालों की पारस्परिकता या मिलीभगत वाली व्यवस्था पर अंकुश लगाना भी आवश्यक समझा जा सकता था। अतः राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेंज में नवम्बर 1994 में लेन-देन आरंभ हो ही गई। इसका एक बहुत सुखद और आश्चर्यजनक परिणाम आया – एक वर्ष में ही ये एक्सचेंज भारत की सबसे अधिक तरलतापूर्ण एक्सचेंज बन गया। बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज ने भी तुरंत अपनी चाल-ढाल बदली और इस नई एक्सचेंज की प्रौद्योगिकी का वरण मार्च 1995 में ही कर लिया। इस प्रकार से, भारत के प्रतिभूति बाजार में भी पारदर्शिता, अनामिता, दलाली उद्योग में स्पर्धा और कार्यकलापों में दक्षता के दर्शन कराने वाली व्यवस्था में परिवर्तन आने लगे।

मिली-भगत पर अंकुश के लिए विनिमनकर्ताओं ने स्टॉक एक्सचेंजों के प्रबंधन में दलालों के दब-दबे को करने के लिए कम से कम 50 प्रतिशत गैर-दलाल प्रबंधकों की नियुक्ति के निर्देश दिए। किंतु इससे भी वास्तविकता में कोई बदलाव नहीं आया। अंततः 2001 में सरकार ने एक्सचेंजों को नियमित कंपनी बनाने का सुझाव किया ताकि स्वामित्व, प्रबंधन और व्यापारिक सदस्यता को अलग-अलग किया जा सके। अब तक कई एक्सचेंज इस प्रकार से मिली-भगत के उन्मूलन की दिशा में प्रयास प्रारंभ कर चुके हैं। सरकार ने निगमीकरण करने और मिली-भगत उन्मूलन के लिए कई प्रकार से करों में छूट को प्रोत्साहन भी दिया है।

15.4.4 कंप्यूटर के पर्दे पर लेन-देन

राष्ट्रीय एक्सचेंज की इस राष्ट्रव्यापी, पूर्णतः स्वचालित, क्रय-विक्रय व्यवस्था में कोई भी सदस्य कंप्यूटर पर अपनी वांछित प्रतिभूतियों की मात्रा (संख्या) और कीमत दर्ज कर सकता है। जब भी कंप्यूटर को कोई अन्य पक्ष उन शर्तों पर लेन-देन को तैयार मिलता है– ये सौदापूर्ण हो जाता है। इस व्यवस्था का ध्येय भी दक्षता, तरलता और पारदर्शिता को बढ़ावा देना है।

खुली बोली व्यवस्था की समस्याओं के निराकरण के लिए संरचना सुविधाओं, व्यवहार और नजरिये को बदलने की प्रक्रिया में भारत का पूँजी बाजार किसी भी विकसित बाजार के समकक्ष हो गया है। भारत की सभी एक्सचेंज 'पाटिये' (Floor Trabing) के स्थान पर अनामितापूर्ण (anonymous) इलेक्ट्रॉनिक लेन-देन पद्धति को 1994 में ही अपना चुकी हैं।

15.4.5 निष्कृति निगम और जोखिम परिसीमन

राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेंज ने दूसरे पक्ष की जोखिम का सटीक आकलन करने और सौदों को पूरा करने के ध्येय से राष्ट्रीय प्रतिभूति निष्कृति निगम की स्थापना की। इसने अप्रैल, 1996 में कार्य आरंभ कर दिया था। एक अच्छी प्रबंधन व्यवस्था तत्काल ही किसी सौदे के दूसरे पक्ष के सभी सौदों और उसकी देनदारियों की समीक्षा द्वारा उसकी वायदा खिलाफी की जोखिम का आकलन कर लेती है। यदि उस पक्ष के सौदे उसकी परिशोधन क्षमता से बाहर जा रहे हों तो तुरंत उसे सौदे करने से रोका जा सकता है। शेष बचे कुचे जोखिम के परिमार्ज़न के लिए एक बड़ा परिशोधन कोष बनाया गया है। एक्सचेंजों के निगमीकरण को प्रोत्साहित करने के लिए सदस्यों द्वारा सदस्यता लेने के समय उसके मूल्य और निगमीकरण के समय उसके निगम को अंतरण मूल्य के अंतर पर देय पूँजीगत लाभ कर से मुक्त कर दिया गया था।

15.4.6 जोखिम प्रबंधन

बाजार की विफलताओं से बचने और निवेशक संरक्षण के लिए नियमों/एक्सचेंजों ने एक व्यापाक जोखिम प्रबंधन व्यवस्था की रचना की है। इस व्यवस्था की निरंतर समीक्षा और सुधार भी होते रहते हैं। इसमें सदस्यों की पूँजी की पर्याप्तता, उनके निवल मूल्यवान, दैनिक आधार पर आकलित पर्याप्त मार्जिन धन, किसी एक शेयर के धारण और कुल लेन-देने की सीमा, क्षतिपूर्ति बीमा, कंप्यूटर पर ऑन-लाइन लेन-देने की समीक्षा और किसी भी सीमा के अतिक्रमण पर तुरंत उस सदस्य द्वारा किसी भी लेन-देन पर रोक आदि के प्रावधान सीमित हैं। अतिशय उच्चावचन पर अंकुश, कीमतों की हेरा-फेरी पर रोक, आदि के लिए वे एक दक्षतापूर्ण बाजार निगरानी व्यवस्था का संचालन भी कर रहे हैं। साथ ही सौदा/परिशोधन गारंटी कोष की स्थापना भी की गई है ताकि सदस्यों की परिशोधन के समय धन की आंशिक या पूर्ण अभाव की समस्या का निपटान हो सके।

15.4.7 विपत्तीकरण (Dematerialisation) प्रबंधन

प्रतिभूतियों के भौतिक हस्तांतरण की समस्याओं के समाधान और उनकी अंतरण त्वरित, सटीक एवं सुरक्षित बनाने के लिए निपेक्षागार अधिनियम, 1996 पारित कर दो निक्षेपागारों – NSDL और CDSL की स्थापना की गई। ये : (क) सार्वजनिक निगमित कंपनियों की प्रतिभूतियों को (किन्हीं अपवादों सहित) निर्बाध रूप से अंतरणीय बनाकर; (ख) उन्हें विपत्तीकृत कर निक्षेपागार के खातों में प्रविष्टी का रूप प्रदान कर; और (ग) उन खातों को व्यवस्थित रखने के माध्यम से काम करते हैं।

सरकार ने विपत्रित प्रतिभूतियों के अंतरण को स्टाम्प शुल्क से मुक्त रखा है। आज सभी सक्रिय रूप से बेची खरीदी जा रही प्रतिभूतियों का विपत्रित रूप में ही धारण, अंतरण और परिशोधन होता है। इस समय विपत्रित परिशोध ही 99.9 प्रतिशत मामलों में हो रहे हैं।

विपत्तीकरण से पूर्व सेबी को प्रति वर्ष शेयरों का अंतरण नहीं हो पाने की 50000 से अधिक शिकायतें मिलती थीं। दस वर्षों में 27 लाख शिकायतें मिलना तो एक रिकार्ड रहा है। किंतु अब शिकायतों की संख्या कम हो रही है। अब कंपनियों के प्रबंधन जान-बूझकर अंतरण में देरी नहीं कर पाते – ये अंतरण स्वचालित रूप से हो जाते हैं।

भौतिक प्रमाण पत्रों को दुबारा परिचलन में आने से रोकने के लिए अब सभी प्रारंभिक सार्वजनिक निर्गम विपत्रित ही होते हैं। साथ ही, किसी निर्गम, राई निर्गम या बिक्री के प्रस्ताव के लिए भी प्रतिभूतियों का विपत्तीकरण अनिवार्य हो गया है। अब अनुसूचित कंपनियों को दस करोड़ रुपये से अधिक के प्रारंभिक सार्वजनिक निर्गम विपत्रित स्वरूप में ही करने होते हैं।

15.4.8 व्युत्पत्तियों का लेन-देन

एस सी (आर) अधिनियम 1954 में एक संशोधन द्वारा तीन दशकों से अग्रिम सौदों पर चला आ रहा वह प्रतिबंध निरस्त किया गया जिसके कारण व्युत्पत्तियों का लेन-देन नहीं हो पा रहा था। व्युत्पत्ति व्यापार के विषय में एल.सी.गुप्त समिति की सिफारिशों के आधार पर वर्ष जून 2000 में राष्ट्रीय और बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंजों में इनका लेन-देन प्रारंभ किया गया। इस समय बाजार में दो सूचकों पर आधारित सूचक अग्रिम और सूचक विकल्प तथा किन्हीं विशेष शेयरों पर स्टॉक अग्रिम और स्टॉक विकल्प निक्षेप उपलब्ध हैं। अभी-अभी ब्याज दर अग्रिम सौदे भी राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेंज में प्रारंभ हो गए हैं।

15.4.9 वैश्वीकण

अमेरिकी (ADR) और वैश्विक (GDR) निक्षेपागार पावतियों, विदेशी मुद्रा परिवर्ती बॉंड और बाह्य व्यापारिक ऋणों के माध्यम से भारतीय कंपनियों को विश्व बाजार से ऋण उठाने की अनुमति मिल चुकी है। ADR/GDR में द्विपक्षीय चिरयोग्यता है। भारतीय कंपनियां सामूहिक शेयरधारिता के आधार पर ADR/GDR प्रायोजन कर अपनी प्रतिभूतियों को विदेशी स्टॉक एक्सचेंजों में सूचीबद्ध करा सकती हैं। अनिवासी भारतीय और विदेशी निगमों को भी भारतीय कंपनियों में निवेश करने की अनुमति है।

विदेशी निवेश संस्थाओं को सरकारी प्रतिभूतियों सहित सभी प्रकार की प्रतिभूतियों में निवेश की अनुमति है। इन निवेशों को पूँजी खाते पर पूर्ण परिवर्तनशीलता प्राप्त है। ये किसी भी कंपनी की चुकता पूँजी के 24% तक का पत्रक निवेश कर सकते हैं। भारतीय कंपनी के प्रबंध मंडल और महासभा की अनुमति से इनका निवेश क्षेत्रानुसार नियम/वैधानिक अधिकतम सीमा तक भी हो सकता है।

भारतीय स्टॉक एक्सचेंज विदेशों में भी अपने विनिमय पटल स्थापित कर सकती है। वैसे ही, अब इंटरनेट के माध्यम से विश्व के किसी भी भाग से इन एक्सचेंजो के लेन-देन में भाग लिया जा सकता है। अब तो म्यूचुअल फंड भी अन्य देशों की शेयर पूँजी में निवेश के लिए वैदेशिक कोष स्थापित कर सकते हैं। वे भारतीय कंपनियों की ADR/GDR में भी निवेश कर सकते हैं।

15.4.10 व्यावर्ती परिशोधन (Rolling Settlement) और स्थगन उत्पादों पर प्रतिबंध

बहुत लंबे व्यापारिक चक्र और 14 से 30 दिन तक की विशाल अबाधित अवस्थिति

(Open Positions) से दूसरे पक्ष की जोखिम बहुत बढ़ जाती थी। इसके कारण अनेक बार अपरिशोधन की समस्या उत्पन्न होती थी। इसके निदान के लिए धीरे-धीरे व्यापारिक चक्र की अवधि घटा कर एक सप्ताह कर दी गई।

भारत में बदला व्यवस्था चलती थी– इसमें एक पक्ष अपने परिशोधन दायित्वों को अगले चक्रों तक स्थगित कर सकता था। इससे किन्हीं पक्षों को उद्याम लाभित लेन-देन (leveraged trading) का अवसर मिल पाता था। किंतु 2001 में इस प्रकार के अग्रिम जैसे 'सौदे और उनकी स्थगनशीलता, पर प्रतिबंध लगा दिया गया और व्यावर्ती परिशोधन प्रणाली को इनके स्थान पर प्रतिष्ठित किया गया।

व्यावर्ती परिशोधन का प्रयोग 1998 में प्रारंभ हुआ था। पहले पहल विशिष्ट प्रतिभूतियों पर T+5 के आधार पर ये व्यवस्था लागू कर उनका व्यापार चक्र एक दिन कर दिया गया। किंतु विभिन्न एक्सचेंज अलग-अलग साप्ताहिक चक्रों के अनुसार काम करती थीं और दलाल बड़ी आसानी से अपने सौदे एक से दूसरी एक्सचेंज में अंतरित कर परिशोधन अवधि को बढ़ा लेते थे। अतः सभी एक्सचेंजों को आदेश दिया गया कि गैर-व्यावर्ती परिशोधनशील शेयरों के लिए उन्हें समरूप साप्ताहिक व्यापार चक्र अपनाना होगा। दिसंबर 2001 में सभी शेयरों पर व्यावर्ती परिशोधन लागू कर दिया गया। अप्रैल 2002 में T+5 के स्थान पर +3 परिशोधन व्यवस्था लागू की गई। अब तो हम व्यावर्ती परिशोधक की उस अवस्था को पा चुके हैं जहाँ सौदा होते ही उसी दिन परिशोधक भी हो जाता है।

बाजार की जरूरतों, वहाँ की अनियमितताओं और हेरा-फेरियों के नियंत्रण और पारदर्शिता के संवर्धन के ध्येय में भारतीय प्रतिभूति बाजारों में धीरे-धीरे उपर्युक्त सुधार लागू किए गए हैं। जहाँ कोई नई हेरा-फेरी या त्रुटि सामने आयी है, अधिकारियों ने तुरंत और सुधार/आवश्यक कदम अपनाए हैं। प्रतिभूति बाजार को अधिक कुशल एवं पारदर्शी बनाकर उसमें निवेशकों के विश्वास को जागृत करने के लिए अनेक उपाय किए गए हैं। किंतु, अभी भी प्रतिभूति बाजार में सुधार की प्रक्रिया संपूर्ण नहीं हुई है।

15.5 भारतीय स्टॉक मार्केट की संरचना और निष्पादन

भारत में 22 स्टॉक एक्सचेंज थीं। सबसे पहली एक्सचेंज बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज है। इसने 1875 में विधिवत काम आरंभ किया था और इस नाते इसकी गणना एशिया की सबसे पुरानी एक्सचेंजों में होती है। वर्ष 2012 में सेबी ने मगध, मेंगलौर, हैदराबाद और सौराष्ट्र कच्छ एक्सचेंजों की मान्यता समाप्त कर इनकी संख्या घटा कर 19 कर दी। वर्ष 1994 से पूर्व भारत के पूँजी बाजार पर बॉम्बे स्टॉक एक्सचेंज का वर्चस्व था। देश के अन्य भागों में काम कर रही वित्तीय इकाइयों की बाजार में समान पैठ नहीं थी और वे मुम्बई स्थित भागीदारों की भांति कीमतों के निर्धारण में हिस्सा नहीं ले पाते थे। प्रायः शेष बाज़ारों के दाम मुम्बई के दामों से अलग रहते थे। कीमतों में इन अंतरों के कारण उन बाजारों में पूँजी के प्रवाह भी सीमित रह जाते थे। किंतु स्पष्ट देशव्यापी संयोजिता और निहित रूप से एक देशव्यापी बाजार की ओर अग्रसरता ने इस स्थिति में बहुत सुधार किये हैं। NSE ने उपग्रह आधारित संप्रेषण प्रणाली द्वारा अपने सभी व्यापारिक सदस्यों को बाजार में समान रूप से पैठ बनाने का अवसर प्रदान किया है। इसी प्रकार अब बॉम्बे और दिल्ली स्टॉक एक्सचेंज भी देश के विभिन्न हिस्सों में अपने व्यापारिक अक्षिपट्टों की संख्याएँ बढ़ाने में जुटी हैं। विभिन्न बाजारों में कीमतों के अंतर का स्थान अब अंतरपण ले रहा है। पिछले, कुछ वर्षों में भारतीय पूँजी बाजार,

विशेषकर द्वितीय बाजार में बहुत बड़े बदलाव आये हैं। उन्नत प्रौद्योगिकी और कंप्यूटर पट्ट आधारित लेन-देन ने स्टॉक एक्सचेंज व्यवस्था का आधुनिकीकरण कर दिया है। सूचीबद्ध कंपनियों की संख्या और बाजार के पूँजीकरण के आकार की दृष्टि से भारतीय प्रतिभूति बाजार देश के आर्थिक विकास के स्तर की अपेक्षा अधिक बढ़ा-चढ़ा कर दिखाई देता है। मार्च 1990 की संख्या 5968 से बढ़कर सूचीबद्ध कंपनियों की संख्या मई 1998 में 10000 को पार कर गई। इसी अवधि में, बाजार पूँजीकरण भी 11गुना बढ़ गया है। वित्त वर्ष 1990-91 में बॉम्बे एक्सचेंज में बाजार पूँजीकरण का आकार रुपये 90,836 करोड़ था। ये राशि 2009-10 में रु.61,65,19 करोड़ पर पहुंच गई। इसी प्रकार, राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेंज में भी पूँजीकरण 1994-95 के रु.3,63,350 करोड़ से बढ़कर 2009-10 में रु. 60,09,173 करोड़ हो गया था। इसी अवधि में बॉम्बे के सेन्सैक्स की वार्षिक औसत शेयर कीमत रु.1050 करोड़ से बढ़कर 2009-10 में रु.15585 करोड़ तक जा पहुंची है। किंतु एस एवं पी सी.एन.एक्स. (निफ्टी) की कंपनियों का वार्षिक औसत शेयर कीमत मात्र रु.364 से बढ़कर रु.4658 करोड़ ही हुआ है। बॉम्बे एक्सचेंज का वार्षिक व्यापार 2007-08 के रु.15,78,856 करोड़ से उछल कर 2010-11 में रु.1103467 करोड़ पर पहुंचा है तो राष्ट्रीय एक्सचेंज में भी वार्षिक व्यापार के आंकड़े रु.3551038 करोड़ से रु.35,77,414 करोड़ पर पहुँचे हैं। इसी प्रकार भारतीय पूँजी बाजार में निवल निवेश रु.62583.56 करोड़ से बढ़कर वर्ष 2012-11 में रु.110718.27 करोड़ हो चला है। जहाँ वर्ष 2002-02 में कुल मिलाकर 5,04,149 शेयरों का व्यापार हुआ था। वहीं ये आंकड़े भी 2009-10 में 33,42,947 तक जा पहुँचे थे। स्टॉक एक्सचेंज में अंतरित शेयरों का मूल्य भी रु.1,36,225 करोड़ से बढ़कर 2009-10 में रु.12,28,612 करोड़ पर जा पहुंचा।

बोध प्रश्न 2

1) एक विकसित शेयर बाजार आर्थिक विकास का संकेतक क्यों माना जाता है?

.....

.....

.....

.....

2) बाजार पूँजीकृत अनुपात क्या है?

.....

.....

.....

.....

3) 1990 के दशक के दौरान प्रमुख शेयर बाजारों के सुधारो की समस्यायों का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

4) डीम्यूटिलाइजेशन क्या है? डीम्यूटिलाइजेशन एक्सचेंज के लाभ बताइए।

.....

.....

.....

.....

5) बाजार की विफलताओं और निवेशकों के हितों की रक्षा के लिए विनियमन/एक्सचेंजों द्वारा कौन से कदम उठाए गए?

.....

.....

.....

.....

15.6 भारत में शेयर व्युत्पत्ति बाजार (Equity Dericative in India)

एक व्युत्पन्न प्रतिभूति (या व्युत्पत्ति) ऐसा वित्तीय अनुबंध है जिसका मूल्य किसी अन्य चीज़ या बात द्वारा निर्धारित होता है। ये निर्धारक चीज़ें या बातें किसी शेयर की कीमत, वस्तु की कीमत, विनिमय दर, ब्याज दर या कोई कीमत सूचक भी हो सकती हैं। व्युत्पत्तियों का लेन-देन कई कारणों से हो सकता है। व्युत्पत्ति द्वारा व्यापारी अपने किसी वर्तमान जोखिम का पूर्वोपाय करने के लिए व्युत्पत्ति बाजार में ऐसी अवस्थिति धारण कर सकता है जो उस जोखिम के कारण संभावित हानि का निराकरण हो जाए। भारत में अधिकांश व्युत्पत्ति प्रयोजनकर्ता अपने आपको पूर्वोपायकर्ता ही बताते हैं। भारतीय कानून भी इनका प्रयोग पूर्वोपाय के लिए ही करने की अनुमति देते हैं। व्युत्पत्तियों के प्रयोग की एक अन्य अभिप्रेरणा मुख्यतः सट्टेबाजी ही है– जानबूझ कर प्रयोक्ता ऐसी अवस्थिति धारण करता है कि वह अपेक्षित कीमत परिवर्तनों का लाभ उठा पाएं। वास्तव में, यह जान पाना बहुत कठिन होता है कि कोई व्युत्पत्ति प्रयोजक उसे पूर्वोपाय मान रहा है या सट्टेबाजी कर रहा है। एक सक्रिय बाजार में दोनों प्रकार के प्रयोजकों की भागीदारी की जरूरत रहती है। इनके तीसरे वर्ग के व्यापारी अंतरपणिक होते हैं– ये तत्काल (स्पॉट) कीमत और व्युत्पत्तियों की कीमतों के अंतर संबंधों की त्रुटियों का लाभ उठाते हैं। उनकी इस गतिविधि से बाजार की दक्षता में सुधार होता है। भारत के चार वर्ष तक चली एक नियमन प्रक्रिया के प्रयास के बाद जून 2000 से व्युत्पत्तियों का व्यापार प्रारंभ हो पाया है। जुलाई, 2001 से शेयर बाजार ने व्यावर्ती परिशोधन अपना लिया। अभी तक तो भारत का व्युत्पत्ति व्यापार (विश्व के अनुभव की तुलना में) अनुभव बहुत सकारात्मक रहा है। शेयर व्युत्पत्तियों के व्यापार की दृष्टि से सभी उदीप्यमान बाजारों में भारत के राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेंज को अग्रणी माना जाता है। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि व्युत्पत्ति बाजार विभिन्न निक्षेपों के सही अंतर्निहित मूल्य को जांचने में एक बड़ी भूमिका निभाने लगा है।

15.6.1 एक्सचेंज विक्रयित और सीधे मेज़ पर विक्रयित व्युत्पत्ति– उपस्कर (Exchange - Traded and over the Counter Derivative Instruments)

अग्रिम और विनिमय जैसे द्विपक्षीय अनुबंधों को सीधे मेज पर तय किया जाता है। इनकी शर्तें लचीली रहती है उनका निर्धारण प्रयोक्ता की जरूरतों के हिसाब से होता है। सीधे मेज पर अनुबंधों में साख जोखिम बहुत होता है– अर्थात् ये जोखिम अधिक

होता है। कहीं इसका पक्ष अपनी देनदारी का भुगतान न करे। भारत में इस प्रकार के अनुबंधों की सामान्यतः अनुमति नहीं है। हाँ, कुछ ऐसे मामले हैं जहाँ भारतीय रिज़र्व बैंक, या फिर वस्तुओं के संबंध में 'अग्रिम बाजार आयोग' द्वारा अनुमति दे दी जाती है। साथ ही, अनौपचारिक स्तर पर 'हवाला' आधारित अग्रिम बाजार भी चलता रहता है। एक्सचेंज विक्रयित अग्रिम अनुबंध की रूपरेखा का मानक स्वरूप है। इसमें दी जाने वाली परिसंपत्तियों, अनुबंध के आकार और परिसंपत्ति अंतरण के संभार तंत्र का पूरा विवरण होता है। ये बाजार संगठित एक्सचेंजों में होता है जहाँ अनेक क्रेताओं-विक्रेताओं का अंतरसंबंध चलता रहा है। भारत में केवल बॉम्बे और राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेंजों में ही व्युत्पत्ति व्यापार होता है। किंतु 2003-04 में देश में हुए ऐसे व्यापार का 99% अंश केवल राष्ट्रीय एक्सचेंज में हुआ था– अतः उसी को एकमात्र व्युत्पत्ति व्यापार केंद्र माना जा सकता है। इस अनुबंध के अनुपालन की गारंटी एक निष्कृति ग्रह (Clearing house) देता है–वह NSE के पूर्ण स्वामित्व की एक सहायक कंपनी है। मार्जिन और दैनिक बाजार आधार पर अग्रिम अवस्थिति के पुनः मूल्यांकन पर उसकी निर्भरता एक्सचेंज में व्यापारित अनुबंधों के साख जोखिम को सीधे मेज वाले अनुबंधों की अपेक्षा बहुत कम कर देता है।

एक्सचेंज व्यापार बाजार में सबसे बड़ी सफलता शेयरों की व्युत्पत्तियों का व्यापार है। जून 2000 में सूचक अग्रिम प्रारंभ हुए थे। अगले वर्ष (जून, 2001) में सूचक विकल्प और जुलाई 2001 में ही कुछ विशेष प्रतिभूतियों पर विकल्प तथा नवंबर 2001 में उन्हीं पर अग्रिम व्यापार भी प्रांरभ हुआ। वर्ष 2005 में राष्ट्रीय एक्सचेंज में 118 शेयरों और 3 शेयर सूचकों पर अग्रिम और विकल्पों का व्यापार चल रहा है। ये सभी व्युत्पत्ति अनुबंध नकल भुगतान परिशोधित हैं और इनमें किसी प्रकार के भौतिक आधारित उपाय का आदान-प्रदान नहीं होता। स्टॉक सूचकों और व्यक्तिगत स्टॉक व्युत्पत्तियों में इनका आरंभ होने के बाद से बड़ी तीव्र प्रगति हुई है। किसी अकेले शेयर पर अग्रिम तो इतने ज्यादा लोकप्रिय हुए हैं कि अक्तूबर 2005 में राष्ट्रीय एक्सचेंज के कुछ व्यापार मूल्य का आधा हिस्सा इन्हीं का था। विश्व स्तर पर भी इस प्रकार के अनुबंधों का अधिकतम परिमाण इसी राष्ट्रीय एक्सचेंज में पाया गया है और 2005 के पूर्वार्द्ध में यह विश्व की बड़ी एक्सचेंजों की पंक्ति में आ गई थी। अकेले शेयर पर विकल्प अग्रिमों की तुलना में कम लोकप्रिय है। सूचक अग्रिमों की लोकप्रियता में सुधार हो रहा है और अक्तूबर 2005 में वे कुल व्यापार मूल्य के 40% तक पहुँच चुके थे। राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेंज ने जून 2003 में ही ब्याज दर अग्रिम प्रारंभ कर दिए थे, किंतु शेयर अग्रिमों की तुलना में इनका व्यापार बहुत कम हुआ है, एक समस्या इनकी अनुबंध शर्तों की त्रुटियां भी रही हैं। उनके कारण आधारित ब्याज दर बाजार भागीदारों द्वारा प्रयुक्त निर्देशांकित दर से अनिश्चित रूप से उच्चावचनपूर्ण हो जाती है। संस्थागत निवेशक 'सीधे मेज पर' व्यापार करने वाले बाजारों में अधिक सक्रिय रहते हैं। वहाँ ब्याज दर विनिमय और अग्रिम दर अनुबंधों का बहुत चलन रहता है। भारत में ब्याज दरों में गिरावट आने के कारण कंपनियों ने अपने स्थिर दर ऋणों को परिवर्ती दर ऋणों में बदल कर उधार की लागत कम कर ली है। हम इस बिंदु पर आकर एक बात स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि : शब्द सीमा को ध्यान में रखते हुए शेयर व्युत्पत्ति उपस्करों की अधिक विस्तृत चर्चा वर्तमान इकाई में नहीं की जायेगी।

तालिका 15.1 : भारतीय शेयर व्युत्पत्ति बाजार में व्यापार शेयर

(करोड़ रु. में)

वर्ष	सूचक अग्रिम	सूचक विकल्प	शेयर अग्रिम	शेयर विकल्प
2008-09	35,81,870	37,31,512	34,79,657	2,29,227
2009-10	39,34,485	80,28,103	51,95,247	5,06,065
2010-11	43,56,909	1,72,69,366	54,95,757	10,30,343
2011-12				
अप्रैल	2,82,313	16,45,980	3,53,162	69,993
मई	3,05,746	18,92,896	3,36,689	70,090
जून	2,65,191	17,84,570	3,22,695	65,792

स्रोत : RBI, BSE, NSE, CCIL और SEBI.

15.7 भारत में विदेशी मुद्रा बाजार का विकास

ऐतिहासिक दृष्टि से साठ के दशक तक भारतीय रुपया ब्रिटिश पौंड से अधिकीलित था। ब्रेटेन बुड्स व्यवस्था के अंतर्गत भारत ने भी अपनी मुद्रा का स्वर्ण समतुल्य मूल्य घोषित किया था। भारतीय रिजर्व बैंक अपनी मुद्रा का उस घोषित मूल्य की ±1% की सीमा में बनाए रखने के लिए पौंड को ही हस्तक्षेप मुद्रा के रूप में प्रयोग करता था। जून 1966 में भारत को रुपये का अवमूल्यन करना पड़ा। रुपये का स्वर्ण समान 0.118489 रखा गया और एक पौंड का मान 18 रुपये नियत हुआ।

अगस्त, 1971 में ब्रेटेन वुड्स व्यवस्था बिखर गई। अधिकांश मुख्य मुद्राओं ने नियत मूल्य मान व्यवस्था को ठुकरा दिया। रुपये का अधिकीलन अमरीकी डालर के साथ कर 7.50 रुपये प्रति डालर विनिमय दर तय की गई। किंतु भारतीय रिज़र्व बैंक ने अभी भी पौंड को ही हस्तक्षेप करेंसी बनाए रखा और रुपये-पौंड विनिमय दर का आधार डालर-पौंड विनिमय दर को बनाया गया। दिसंबर 1971 के स्मिथ सोनियन समझौते के अंतर्गत डालर को छोड़ एक बार पुनः पौंड के साथ अधिकीलन कर दिया गया– किंतु इस तुल्यता की सीमा ±2.25% रखी गई। पौंड स्वयं 1972 से 'तरित' करेंसी हो गया और परिणामस्वरूप उसके साथ अधिकीलित रुपये का मान भी (अन्य मुद्राओं में) बदलने लगा। सितंबर, 1975 में ब्रिटिश अर्थव्यवस्था की हालत खराब होने के कारण पौंड का 20% अवमूल्यन हो गया– परिणामस्वरूप रुपये को भी ये मूल्य ह्रास झेलना पड़ा। इससे भारत की आंतरिक अर्थव्यवस्था पर गंभीर प्रभाव पड़े। स्फीति दर असाध्य हो गई। भारत सरकार को तुरंत (25 सितंबर, 1975) ही रुपये को पौंड की गुलामी से मुक्त करना पड़ा। फिर तो रुपये की तुल्यता विश्व की कुछ मुद्राओं के एक समुच्चय (जिसे 'करेंसी बास्केट' का नाम दिया गया) के रूप में निर्धारित होने लगी। उस समुच्चय में सम्मिलित करेंसियों के अनुपात गोपनीय रखे गए ताकि सट्टेबाज रुपये की विनिमय दर के रूझानों को भांपने या प्रभावित करने के प्रयास नहीं कर पाएं। एक समुच्चय के साथ अधिकीलक का मुख्य लाभ यही था कि अब भारतीय रुपया किसी एक देश की मुद्रा पर निर्भर नहीं रहा। रिज़र्व बैंक उस समुच्चय की करेंसी रचना में बाजार में सट्टेबाजी को बढ़ावा दिए बिना ही परिवर्तित करने में भी समर्थ हो गया।

वर्ष 1990-91 में विदेशी मुद्रा में भुगतान संकट ने एक बार फिर विनिमय दर के प्रभावी प्रबंधन का महत्त्व उजागर किया। मार्च 1, 1992 के दिन रिज़र्व बैंक ने एक ''उदारीकृत विनिमय दर प्रबंधन व्यवस्था'' की घोषणा की। उसका मुख्य ध्येय बाजार की शक्तियों का अधिक महत्त्व प्रदान कर भुगतान शेष को दीर्घकालिक धारणीयता से युक्त बनाना था। इस व्यवस्था में रुपये को सभी अनुमोदित बाह्य लेन-देनों के लिए परिवर्तनशील बना दिया गया। निर्यातकों को अपनी अर्जित विदेशी मुद्रा का 60% भाग खुले बाजार में बेचने और शेष 40% विदेशी मुद्रा व्यापारियों के माध्यम से अधिकारिक विनिमय दर पर रिज़र्व बैंक के पास जमा कराने का अधिकार दिया गया। इस नई व्यवस्था के अंतर्गत रिज़र्व बैंक वर्ष 1992 में दैनिक आधार पर अपनी विदेशी मुद्राओं की खरीद और बिकवाली की दरें घोषित करता था। उन्हीं दरों पर अधिकृत मुद्रा व्यापारी लेन-देन करते थे।

उदारीकरण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाते हुए रिज़र्व बैंक ने मार्च 1, 1993 से रुपये को चालू खाते पर पूर्णतः तरित बना दिया। इसे ''परिवर्तित उदारीकृत विनिमय दर प्रबंधन व्यवस्था'' का नाम दिया गया। इसे साथ ही भुगतान शेष के चालू खाते के सभी लेन-देन अधिकृत विदेशी मुद्रा विक्रेताओं के माध्यम से बाजार निर्धारित विनिमय दर पर होने लगे। विदेशी मुद्रा प्राप्तियों और भुगतानों पर विनिमय नियंत्रण विनियम लागू रहे। अतः नई व्यवस्था के साथ विदेशी मुद्रा बाजार में अधिक नम्यता आ गई। अनेक व्यापार संबंधी रुकावटें दूर हुईं और भारतीय अर्थव्यवस्था के विश्व अर्थव्यवस्था से एकीकरण के पूरे लाभ पाना संभव हो गया।

उदारीकरण की प्रक्रिया में रिज़र्व बैंक ने विदेशी मुद्रा बाजार के और विकास को ही अपना लक्ष्य रखा है। नवंबर 22, 1994 को ''भारत में विदेशी मुद्रा बाजार पर एक विशेषज्ञ दल'' का गठन हुआ। श्री ओ.पी. सोढानी के नेतृत्व वाले इस दल का कार्य विदेशी मुद्रा जोखिम पूर्वोपाय उत्पादों की पहचान, विदेशी मुद्रा बाजार के और आगे विकास और नए व्युत्पत्ति उत्पाद सुझाना था। बाजार के विस्तृत एवं गहन अध्ययन के बाद इस दल ने जून, 1995 में 33 सिफारिशें की, जिनमें से 25 पर तो भारतीय रिजर्व बैंक को ही आचरण करना था। इस दल की कुछ प्रमुख सिफारिशें इस प्रकार थीं :

i) बैंकों को विनिमय बाजार में भागीदारी करने, निवल रातभर की अवस्थिति तय करने और अंतराल सीमा तय करने का अधिकार दिया जाए। यद्यपि औपचारिक रूप से अभी भी रिज़र्व बैंक को ही इन सीमाओं आदि को स्वीकृति प्रदान करनी थी, किंतु विदेशी बाजारों में अपनी व्यापारिक अवस्थिति के निर्धारण, चरण-I पूँजी के 15% तक विदेशी बाजार में उधार लेने/निवेश करने, पूर्व नियत सीमाओं में रहते हुए ब्याज दर तय करने और विदेशी मुद्रा निर्दिष्ट अनिवासी जमाओं की अवधि (तीन वर्ष से अधिक नहीं) तय करने, अंतर्बैंक उधार पर वैधानिक अग्रक्रेयता एवं परिसंपदा देयता प्रबंधन में व्युत्पत्तियों के प्रयोग की स्वतंत्रताएँ (बैंकों को) प्रदान करने के सुझाव दिए गए थे।

ii) वर्तमान विदेशी देयताओं की घोषणा करने पर निगमों को पूर्वोपाय अपनाने दिए जाएं, किंतु एशियाई संकट के बाद ये सुविधा निलंबित कर दी गईं। इसके अनुसार जिन निगमों के विदेशी मुद्रा अर्ण/विदेशी मुद्रा रखते थे उन्हें अपने इन खातों में सुलभ रकम के आधार पर मार्जिन व्यापार की अनुमति दी गई थी। वे अपने

अग्रिम अनुबंध पुनः निर्धारित करने या समाप्त करने को स्वतंत्र हो गए थे। पर सुविधा निलंबन के बाद पुनः निर्धारण/समापन की स्वतंत्रता पर रोक लग गई है– अब तो वे केवल वर्तमान अनुबंधों को आगे बढ़ा सकने के अधिकारी रह गए हैं।

iii) अधिकृत विनिमय व्यापारियों को विदेशों में चाहे जिस मुद्रा के कोष धारण करने दिया जाएं।

iv) रिज़र्व बैंक के बाजार हस्तक्षेप चुन-चुन कर ही किए जाएं।

v) इंडस्ट्रीयल डेवल्पमेंट बैंक ऑफ इंडिया, इंडस्ट्री फाईनेंस कारपोरेशन ऑफ इंडिया आदि वित्तीय संस्थानों को विदेशी मुद्रा बाजार में कारोबार की छूट दे कर इस बाजार के भागीदारों की संख्या का विस्तार किया जाए।

इन सिफाारिशों में से कुछ एक पर तो सट्टेबाजी की आशंकाओं के कारण क्रियान्वयन नहीं हो पाया है।

विदेशी मुद्रा बाजार के विकास में इस क्रमिक उदारीकरण ने 1997 के प्रांरभ में ही पूँजी खाते पर परिवर्तनशीलता आवश्यक बना दी। फरवरी 28, 1997 को रिज़र्व बैंक ने पूँजी खाता परिवर्तनशीलता समिति (तारापुर समिति) का गठन किया।

तारापुर समिति के अनुसार ''पूँजी खाता परिवर्तनशीलता का अर्थ है बाजार आधारित दरों पर आंतरिक वित्तीय परिसंपत्तियों की विदेशी वित्तीय परिसंपत्तियों में (इसके विपरीत भी) परिवर्तनशीलता/समिति की मुख्य सिफारिशों का संबंध प्रत्यक्ष विदेशी निवेश, पत्रक निवेश, संयुक्त उद्यम निवेश, प्रकल्प निर्यात, भारतीय कंपनियों के विदेश कार्यालयों की स्थापन, विदेशी मुद्रा अर्जक खातों की प्रयोजन सीमा को 50% तक बढ़ाने और विदेशी संस्थागत निवेशकों को ऋण एवं शेयर बाजार में अपने धारण के लिए अग्रिमों द्वारा पूर्वोपाय करने से था।

समिति ने विनिमय दर नीति के विषय में सुझाया कि रिज़र्व बैंक को निरपेक्ष वास्तविक प्रभावी विनिमय दर (REER) के ±15%में अपनी निगरानी व्यवस्था केंद्रित करनी चाहिए। उसे उसी समय हस्तक्षेप करना चाहिए जब REER इस ±15% की सीमा का अतिक्रमण करने लगे। समिति का आग्रह है कि पूँजी खाते पर परिवर्तनशीलता के संदर्भ में विनिमय दर नीति की विश्वस्तता बहुत महत्त्वपूर्ण होती है। इसी से विनिमय दरनीति में पारदर्शिता का संचार होगा।

समिति ने आग्रहपूर्वक कहा है कि भारतीय अर्थव्यवस्था के वृद्धिमान एकीकरण के कारण चालू खाते का घाटा बिना किस बाध्य संरोध के ही धारणीय बना रहेगा। पूँजी खाता परिवर्तनशीलता के संदर्भ में पूँजी प्रवाहों का ही भुगतान शेष पर अधिक प्रभाव होगा। समिति ने कम से कम 6 मास के आयात के समान सुरक्षित विनिमय कोष/3 मास के आयात + ऋण सेवा दायित्व के 50% + एक मास के आयात-निर्यात बनाए रखने का सुझाव दिया है।

इन सिफारिशों के बाद से अच्छी प्रगति दृष्टिगोचर हुई है। ब्याज दर जोखिम के पूर्वोपाय और स्थिर आय व्युत्पत्ति बाजार के विकास के लिए ब्याज दर विनिमयों और अग्रिम दर अनुबंधों के विषय में अभी कुछ दिशा-निर्देश भी जारी किए गए हैं। सरकारी प्रतिभूतियों के बाजार को विकसित करने के कदम उठाए गए हैं और कतिपय शर्तें

पूरी करते हुए बैंकों को देश में बिक्री के लिए स्वर्ण आयात करने की छूट भी दी गई है। इस प्रकार सोने के व्यापार से जुड़े उन लेन-देनों को, जो विदेशी मुद्रा बाजार का अधिकृत अंग नहीं बन पाते थे, भी अधिकृत स्वरूप प्रदान किया जा सकेगा।

15.8 भारत में चलन व्युत्पत्ति का बाजार (Currency Derivative Market in India)

करेंसी व्युत्पत्ति विक्रेता और क्रेता के बीच ऐसा अनुबंध है जिसका मूल्य उसकी आधारित परिसंपत्ति अर्थात् करेंसी के परिमाण द्वारा निर्धारित होता है। यह एक अग्रिम अनुबंध होता है जिसके अनुसार किसी भावी तिथि पर एक करेंसी का दूसरी से नियत दर पर विनिमय होता है।

यद्यपि ये चलन मुद्रा व्युत्पत्तियाँ काफी पहले से प्रचलन में हैं, फिर भी इनका बाजार ब्याज दर व्युत्पत्तियाँ जितना सक्रिय नहीं है। करेंसी अग्रिम और विनिमय जैसे सीधे मेज पर अंतरणीय उपस्कर अधिक लोकप्रिय हैं। आयातक-निर्यातक और बैंक रुपये के अग्रिम बाजार से अपने करेंसी धारण का पूर्वोपाय कर सकते हैं। इस बाजार में व्यापार और तरलता में वृद्धि तो हो रही है किंतु अधिकतर व्यापार एक वर्ष या कम की अवधि के अनुबंधों का ही हो रहा है। करेंसी विनिमय में बैंक और कंपनियाँ अपने रूपये के ऋणों को विदेशी मुद्रा ऋण में (या इसके उलट भी) परिवर्तित कर सकते हैं। सीधे मेज पर करेंसी विकल्प का लेन-देन अभी धीमा ही है। (भारत में किसी करेंसी व्युत्पत्तियों का व्यापार एक्सचेंज के माध्यम से नहीं होता।)

15.8.1 भारत में एक्सचेंज विक्रयित करेंसी व्युत्पत्तियाँ

वर्ष 2010-11 में करेंसी अग्रिम बाजार काफी सक्रिय रहा। मार्च 2011 में एक वर्ष पूर्व के $7.1 बिलियन की तुलना में तीनों सक्रिय एक्सचेंज (राष्ट्रीय, एम सी एक्स-एस एक्स और बॉम्बे) में दैनिक कारोबार $8 बिलियन रहा। अर्थव्यवस्था के वैश्वीकरण के साथ-साथ भारतीय कंपनियों और व्यक्तियों का विनिमय जोखिम से वास्ता अधिक हो जाता है। इसके कारण आंतरिक और वैश्विक वित्त बाजारों में घटनाक्रम में निहित रहते हैं। रिज़र्व बैंक ने भी नागरिकों के विनिमय जोखिम के पूर्वोपाय के रूप में नए उपस्करों की रचना की है। अब वे चार करेंसी युग्मों में मान्य एक्सचेंजों में व्यापार कर सकते हैं। करेंसी जोखिम के पूर्वोपाय के लिए उपलब्ध उपस्करों में वृद्धि के लिए स्टॉक एक्सचेंजों को नागरिकों के लिए डालर-रुपया स्पॉट विनिमय दर पर आधारित साधारण (वनीला) करेंसी विनिमय आरंभ करने की अनुमति दी गई है। ये एक्सचेंज विनियमित करेंसी विनिमय बाजार, रिज़र्व बैंक और सेबी द्वारा समय समय पर दिए गए निर्देशों के अनुसार संचालित होता है। भारतीय विनिमय बाजार की प्रगल्भता में वृद्धि के बाद अब बड़े विशाल कोष वाले विदेशी संस्थागत निवेशकों को अब वित्त वर्ष के प्रारंभ के पत्रक संचय के 10% तक (पहले के 2% के स्थान पर) निरस्त करने या फिर पुनः धारण करने की अनुमति मिल चुकी है। भारतीय करेंसी व्युत्पत्ति बाजार के व्यापार सार इस प्रकार है :

तालिका 15.2 : भारतीय चलन व्युत्पत्ति बाजार में लेन-देन करेंसी की व्युत्पत्तियाँ

(करोड़ रूपयों में)

वर्ष	अग्रिम	विनिमय	एक्सचेंज विक्रित करेंसी विकल्प और अग्रिम
2008-09	25,54,994	40,65,695	3,11,389
2009-10	20,35,879	31,45,402	37,27,262
2010-11	28,90,222	41,12,539	84,06,307
2011-12			
अप्रैल	2,06,047	3,67,137	7,22,275
मई	2,17,188	4,74,893	10,00,498
जून	2,40,047	4,95,622	10,39,010

स्रोत : BSE,NSE, CCIL और SEBI

15.9 भारत में दीर्घकालिक सरकारी बाँडों और निगम ऋणों का बाजार

निगम और सरकारी बॉड बाजार पूँजी बाजार का बहुत महत्त्वपूर्ण घटक होता है। भारत के अभी निगम ऋण बाजार प्रारंभिक स्थिति में ही हैं। इसकी भागीदारी सीमित है और यह अति-अतरल बाजार मुख्यतः अधिलाभ प्रेरित ही रहता है। यह विकास अभाव दो कारणों से विकृति स्वरूप लगता है : प्रथम, भारत का शेयर और शेयर व्युत्पत्ति बाजार तो विश्व स्तरीय है, और उसकी उच्च गुण संरचना भी विद्यमान है। दूसरे, बाँड बाजार, विशेषकर सरकार बाँडों के बाजार के लिए भी उतनी ही विकसित संरचना उपलब्ध है। वर्ष 2007 तक तो भारतीय निगम बाँड बाजार में लेन-देन की जानकारी अपूर्ण रहती थी– जो कुछ पता चलता था वह भी किसी विशेष घटनाक्रम वश ही पता चल जाता था। किंतु उसी वर्ष में सेबी ने सीधे मेज पर लेन-देन वाले बाँड बाजार की सभी गतिविधियों की पूरी जानकारी सुलभ कराने के प्रयास आरंभ किए। अभी तो इस बाजार का व्यापार काफी सीमित ही लगता है। इसका दैनिक स्तर लगभग 140 सौदों तक सीमित है जिनमें $80 मिलियन का लेन-देन हो जाता है। किंतु विश्व भर में ही निगम बाँड बाजार प्रायः अतरल ही पाए जाते हैं। हाँ, यह भी सच है कि इस बाजार में तरलता वृद्धि से अंततः बांड निर्गमकर्ता की पूँजी की लागत में कमी ही आएगी। भारत में 2007 में निगम बांड व्यापार का अनुपात काफी उच्च (70%) था जो अधिकांश पूर्व एशियाई उदीप्यमान बाजारों से कम नहीं था। किंतु भारतीय बाजार में अधिक निगम बांड विद्यमान ही नहीं हैं–इसी कारण इनका द्वितीयक बाजार सीमित और अतरल रह जाता है– भले ही लेन-देन अनुपात कितना ही स्वस्थ क्यों न हो।

भारत में 1991 की नई आर्थिक नीति के बाद से ही सरकारी प्रतिभूति बाजार में वास्तविक सक्रियता आई है। सुधारपूर्व अवधि में विवेकशील निवेश उपाय के रूप में विकसित वैधानिक तरलता अनुपात का प्रयोग मुख्यतः बैंकों के पास उपलब्ध तरलता का हरण करने के लिए हो रहा था। उच्च तरलता अनुपात ने सरकारी प्रतिभूतियों, जो प्रशासकीय रूप से नियत निम्न ब्याज दर पर जारी होती थी, का एक बंदी बाजार था। उदारीकरण

के बाद से इस तरलता अनुपात को, कई चरणों में वैधानिक न्यूनतम स्तर 25% तक घटा दिया गया है। पिछले कुछ वर्षों में सरकारी प्रतिभूति बाजार के प्रगल्यन और इसी पारदर्शिता बढ़ाने के लिए अनेक उपाय किए गए हैं। सरकारी घाटा समाप्त कर दिया गया है और केंद्र सरकार अब बाजार निर्धारित दरों पर नीलामी के माध्यम से अधिकांश ऋण उठा रही है। सरकारी प्रतिभूति बाजार में कुछ प्रारंभिक प्रमुख सुधार ये हैं:

- प्रशासकीय ब्याज दरों के स्थान पर नीलामी में कीमत का आकलन होता है;
- तदर्थ राजकोषीय हुंडियों द्वारा स्वचालित रूप से राजकोषीय घाटे के वित्तीयन को बंद कर दिया गया है;
- सरकारी प्रतिभूति बाजार में प्राथमिक विक्रेताओं का प्रवेश;
- इन प्रतिभूतियों के लेन-देन में पारदर्शिता सुनिश्चित करने के लिए आदान (Delivery) बनाम भुगतान (DVP) परिशोधन व्यवस्था का प्रयोग;
- पुनः क्रम अनुबंध रेपो का अल्पकालिक तरलता उपाय के रूप में प्रयोग प्रारंभ। आगे चलकर तरलता समंजन सुविधा प्रारंभ। यह सुविधा रेपो और प्रतिरेपो के माध्यम से कार्य करते हुए अल्पकालिक ब्याज दरों का न्यूनतम-अधिकतम स्तर निर्धारित कर देती है। यह सुविधा अब तरलता प्रबंधन और रात भर वाले बाजार में ब्याज दरों के संकेत चिन्ह का कार्य करने लगी है।
- बाजार स्थायीकरण योजना का आरंभ– इसके रिजर्व बैंक को व्यवस्था में उपलब्ध तरलता प्रबंधन के नए उपाय सुलभ करा दिए हैं।
- तरलता प्रबंधन और स्तर निर्धारण के लिए 91 दिन की राजकोषीय हुंडियां प्रारंभ शून्य कूपन बाँड, तरित दर ब्राँड, पूँजी सूचक संबद्ध बाँड जारी और एक्सचेंज विनियमित ब्याज़ दर अग्रिमों का प्रारंभ। ब्याज़ दर विनिमय, अग्रिम दर अनुबंध जैसी सीधे मेज पर व्यापारित ब्याज़ दर व्युत्पत्तियों का आरंभ।

निम्न ऋणों का भारतीय प्राथमिक व्यापार मुख्यतः निजी आधार पर ऋणपत्र आदान-प्रदान का बाजार है। यह ऋण पत्र बैंकों और वित्तीय संस्थानों म्यूचुअल फंड, बड़े निगमों और निवेशकों जैसे थोक खरीददारों के सुपुर्द कर दिए जाते हैं। पिछले वर्षों में ऋण पूँजी के सार्वजनिक निर्गम अनुपात में कमी ही आई है। वर्ष 2002 में निगम ऋण प्रतिभूतियों द्वारा संचित कुल राशि का 92% भाग निजी स्तर पर सौदों के माध्यम से ही जुटाया गया था।

स्टॉक एक्सचेंजों द्वारा सुलभ कराए गए इलेक्ट्रॉनिक अनुदेश मिलान अलिंद से निगम ऋणपत्र बाजार तक पहुँचा जा सकता है। बॉम्बे एक्सचेंज में ये लेन-देन उसकी BOLT व्यवस्था पर संभव है। इस एक्सचेंज ने विकास वित्त संस्थानों, सार्वजनिक उपक्रमों के ऋणपत्रों और ऋण प्रतिभूतियों को F समूह में सूचीबद्ध किया है। भारत में निगम ऋण प्रतिभूतियाँ ये हैं : अपरिवर्तनीय ऋणपत्र, आंशिक परिवर्तनीय/पूर्ण परिवर्तनीय ऋणपत्र, प्रतिभूत बढ़ौती पत्रक, वारंट सहित ऋणपत्र, गहन कटौती बाँड, सार्वजनिक उपक्रम बाँड और कर मुक्त बाँड।

15.9.1 निगम ऋण बाजार के विकास की संभावनाएँ

भारत का निगम बाँड बाजार वित्त बाजार के अन्य घटकों की तुलना में पिछड़ा रह गया है, यद्यपि प्राथमिक निर्गम बहुत हुए हैं किंतु इनमें से अधिकांश सार्वजनिक वित्त संस्थानों द्वारा किए गए हैं और इनका भी निजी आधार पर अन्य वित्तीय संस्थानों के पास विनियोग किया गया है। यही कारण है कि न द्वितीयक बाजार का समुचित विकास हो पाया है और न ही इस बाजार में तरलता का समावेश हुआ है।

सरकार ने निगम बाँड और प्रतिभूतिकरण पर उच्चस्तरीय (पाटिल) समिति का गठन किया था। इसे भारत के सक्रिय निगम बांड बाजार के विकास की बाधाओं की पहचान कर उचित उपाय सुझाने को कहा गया था। समिति ने प्राथमिक निर्गम प्रक्रिया को अधिक विवेकशील बनाने, प्रकटीकरण बढ़ाने, पारदर्शिता स्तर सुधारने और द्वितीयक निष्कृति एवं परिशोधन प्रक्रिया को सबल बनाने के लिए अनेक सुझाव दिए हैं। भारत सरकार, रिज़र्व बैंक और सेबी इन सिफारिशों को सिद्धांत रूप में स्वीकार कर इन पर अमल का कार्य प्रारंभ कर चुकी है।

बॉम्बे और राष्ट्रीय एक्सचेंज तथा वित्त उद्योगव्यापी संस्था, भारतीय स्थिर आय, मुद्रा बाजार और व्युत्पत्ति संघ (FIMMDA) ने अपने व्यापार सूचना अलिंद या पटल सक्रिय कर दिए हैं। किसी एक्सचेंज में हुआ निगम बाँड व्यापार तो उसी के पटल पर आता है किंतु सीधे मेज पर व्यापार को किसी भी सूचना पटल पर डाला जा सकता है। (FIMMDA) अपनी वेबसाइट पर सारे व्यापार की सम्मिलित सूचना प्रदर्शित कर रहा है। जुलाई 2007 से बॉम्बे और राष्ट्रीय एक्सचेंज भी अपने अपने क्रयादेश चालित अलिंद प्रारंभ कर चुके हैं। किंतु वास्तव में अभी भी अधिकांश लेन-देन सीधे मेज पर ही होता है। सेबी ने निगम बाँड बाजार की प्रक्रिया को अधिक सुचारू बनाने के लिए उनका व्यापार स्थगन काल घटा कर सरकारी प्रतिभूतियाँ जितना ही कर दिया है। साथ ही व्यापार की मानक इकाई का आकार रुपये एक लाख और परिशोधन के लिए दिवस गणना को भी एकसमान (मानक) बना दिया है। साथ ही, ब्याज़ और परिपक्वता भुगतान के लिए अब बाँड जारी करने वाले इलेक्टॉनिक निष्कृति प्रणाली, तत्काल सकल परिशोधन या राष्ट्रीय इलेक्ट्रॉनिक कोष अंतरण का प्रयोग करेंगे।

प्राथमिक निर्गमन प्रक्रियाओं में और सुधार अपेक्षित है। यही निजी आधार पर विनियोग की प्रबलता का निवरण कर पाएंगे। परिशोधन जोखिम घटाने और दक्षता बढ़ाने के लिए पाटिल समिति ने एक सशक्त निष्कृति प्रणाली की स्थापना का सुझाव भी दिया है। दूसरे पक्ष के परिशोधन जोखिम को घटाने के लिए प्रारंभ में सौदा प्रति सौदा परिशोधन करते हुए अंततः इसे विल सौदा और धन अंतरण तक ले जाना है। इससे परिशोधन व्यवस्था की दक्षता में वृद्धि होगी। (इस सुधार को DvPI से DvPIII की ओर अग्रसर होने का नाम दिया गया है। वस्तुतः अंतरण बनाम भुगतान प्रमापिका की तीन मुख्य श्रेणियां हैं : DvPI, DvP II और DvPIII। प्रथम श्रेणी में नकद और प्रतिभूतियों का आदान-प्रदान एक साथ होता है। दूसरी श्रेणी में प्रतिभूतियों का लेन-देन तो सौदों के अनुसार ही होता है किंतु नकद कोष अंतरण निवल आधार पर किया जाता है। तीसरी श्रेणी में प्रतिभूति पत्रकों और नकद, दोनों का ही लेन-देन निवल आधार पर होता है।

पाटिल समिति ने सरकार को भी दो महत्त्वपूर्ण सुझाव दिए हैं, एक तो स्टांप शुल्क को विवेकशील बनाना और दूसरा सरकारी प्रतिभूतियों की ही भांति भुगतान करते समय कर न काटने की छूट देना। निगम ऋण बाजार के विकास से जब रिजर्व बैंक को

लगेगा कि नए सार्वजनिक निर्गम और द्वितीय बाजार में दक्ष एवं सुरक्षित परिशोधन व्यवस्था इन ऋणों का सही मूल्यांकन करने में सक्षम हो गया है तो वह इन ऋणों को भी अपने बाजार रेपों में सम्मिलित कर लेगा। मध्य अवधि में तो आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखकर सरकारी और निजी ऋणों में विदेशी निवेश का स्तर निर्धारण पूँजी खाते के प्रबंधन के उपस्कर के रूप में होता रहेगा। जब एक अधिक कुशल परिशोधन प्रणाली बन जाएगी तो विदेशी निवेश के लिए अधिक उदारता संभव हो जाएगी और उसी समय सकल सार्वजनिक ऋण –जी.डी.पी अनुपात भी अधिक स्वीकार्य (50% से कम) हो जाएगा, निजी निगम बाँड बाजार अधिक प्रगल्य और तरल हो जाएगा, तथा बीमा और पेंशन कोषों के लिए भी भारत में अच्छा बाजार विकसित हो पाएगा। अतीत में तो भारत के ऋण बाजार पर केवल सरकारी बाँड छाए रहे हैं– इसका एक कारण राजकोषीय प्रबलता और दूसरा बचत अनुबंधों का अभाव रहा है। बचत अनुबंधों के अभाव के कारण केवल बैंक ही निगम बाँड बाजार में अपना धन लगा पाते थे– वह भी निजी विनियोग के माध्यम से। रिज़र्व बैंक को आशा है कि मंथर गति से विकसित हो रहे बीमा, म्यूचुअल फंड आदि क्षेत्रों के साथ विश्वस्त सरकारी प्रतिभूति बाजार, सक्षम सूचना, व्यापार और परिशोधन प्रणालियां शीघ्र ही एक सक्रिय एवं उर्जस्वी निगम ऋण बाजार का निर्माण कर देंगी, पाटिल समिति की सिफारिशों ने इस विकास के लिए एक उपयुक्त रूपरेखा पहले ही तैयार कर दी है। विभिन्न एजेंसियों ने उन सिफारिशों के क्रियान्वयन का काम भी आरंभ कर ही दिया है।

बोध प्रश्न 3

1) डेरिवेटिव ट्रेडिंग के कारण बताइए।

.....

.....

.....

2) कौन से उपकरण एक्सचेंज ट्रेडेड बाजारों में काम कर रहे हैं?

.....

.....

.....

3) पूँजा खाता परिवर्तनीयता क्या है?

.....

.....

.....

4) ऐक्सचेंज ट्रेडेड मुद्रा विकल्प बाजार के नियामकों के नाम बताइए।

.....

.....

.....

5) भारत में सरकारी प्रतिभूति बाजार में हुए विभिन्न चयनात्मक सुधारों के बारे में बताइए।

.....

.....

.....

15.10 सारांश

वैश्वीकरण-उदारीकरण ने भारतीय अर्थव्यवस्था की वित्तीय संरचना में बड़े परिवर्तनों की बाढ़ सी ला दी है। परिणाम रहा है आंतरिक और विश्वस्तरीय वित्तीय बाजारों का एकीकरण। उससे जहां अनेक नए अवसरों के द्वार खुले हैं वहीं हमारी वित्त व्यवस्था को महत्त्वपूर्ण जोखिमों का भी सामना करना पड़ रहा है। पूँजी बाजार में प्रभावशाली सुधार हुए हैं पर अनेक स्तरों पर समस्याएँ बनी हुई हैं। सबसे बड़ी समस्याएं तो दीर्घकालिक ऋण और निगम ऋण बाजारों की है। इसी कारण अनेक भारतीय कंपनियां दीर्घकालिक ऋण एवं शेयर पूँजी जुटाने के लिए विदेशी पूँजी बाजारों की ओर उन्मुख हो रही हैं। इन सब के बाद भी वर्तमान आर्थिक परिस्थितियों से यही संकेत मिल रहे हैं कि जहां अमरीकी और यूरोपीय बाजार अभी मंदी से ऊपर नहीं उठ पा रहे हैं, वहीं भारतीय स्टॉक बाजार में संवृद्धि की प्रक्रिया चलती रहेगी।

15.11 अभ्यास प्रश्न

1) अर्थव्यवस्था की संवृद्धि प्रक्रिया में एक सुविकसित पूँजी बाजार की भूमिका और उसकी संभावनाओं पर चर्चा करें।

2) भारतीय पूँजी बाजार के विकासोन्मुखी सुधारों का विवरण दें और इनके शेयर एवं विदेशी मुद्रा बाजारों की संवृद्धि पर प्रभावों की समीक्षा करें।

3) भारत में निगम ऋण बाजार के वर्तमान परिदृश्य और त्रुटियों की चर्चा करें।

4) सेबी के कार्य बताएँ। भारतीय शेयर बाजार के विकास के लिए सेबी के मुख्य कदमों की परिभाषा करें।

15.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Patil, R.H. (2000) : 'The Capital Market in 21st Century, *Economic and Political Weekly*', November.

Saha, A (1999) : Institutional Change on India"s Capital Markets, *Economic Political Weekly*.

Ajay Shah and Susan Thomas (2001) : 'The evolution of the securities markets in India in the 1990s', *Technical report, IGIDR*, September.

Indian Securities Market: A review, Volume V, (2002) : National Stock Exchange of India Limited, Mumbai.

CI online (2003) : 'Round table conference on capital market reforms' http:// www.capitalideasonline.com/ tellfr.php3

Reddy, Y. V. (2007) : 'Developing Debt Markets in India: Review and prospects', Speech at Washington, USA on October 18, 2007, http://rbidocs.rbi.org.in/rdocs/ Bulletin/PDFs/82026.pdf

India's Bond Market-Development and Challenges Ahead, Working Paper Series on Regional Economic Integration No. 22, December, 2008.

Mishra, Alok and Vyas Iti (2011) : Linkage Dynamics of India Financial Markets: A Theoretical and Empirical Perspective, VDM Verlag Publication, Germany,

15.13 बोध प्रश्नों के उत्तर/संकेत

बोध प्रश्न 1

i) भाग 15.1 देखें

ii) भाग 15.1 देखें

iii) भाग 15.2 देखें

बोध प्रश्न 2

i) भाग 15.3 देखें

ii) भाग 15.3 देखें

iii) उपभाग 15.3.1 देखें

iv) उपभाग 15.4.3 देखें

v) उपभाग 15.4.6 देखें।

बोध प्रश्न 3

i) भाग 15.6 देखें

ii) उपभाग 15.6.1 देखें

iii) भाग 15.7 देखें

iv) उपभाग 15.8.1 देखें

v) उपभाग 15.8.1 देखें।